॥२१७॥

॥ रामकथा ॥

मोरारिबापू

मानस-मधुमास

वाराणसी (उत्तरप्रदेश)

नौमि तिथि मधु मास पुनीता। सुकल पच्छ अभिजित हरिप्रीता।।
नौमि भौम बार मधुमासा। अवधपुरीं यह चरित प्रकासा।।

वाराणसी ये भगवान विश्वनाथ की बड़ी पुरानी ही नहीं, बड़ी सनातन और पावन नगरी है। ये संतों की, आचार्यों की, पंडितों की, संगीतज्ञों की और मुक्ति की नगरी है। मेरी पचपन साल की ये रामकथा की यात्रा है माँ गंगा के तट पर और ये दूसरी गंगा मेरे सामने है।

– मोरारिबापू

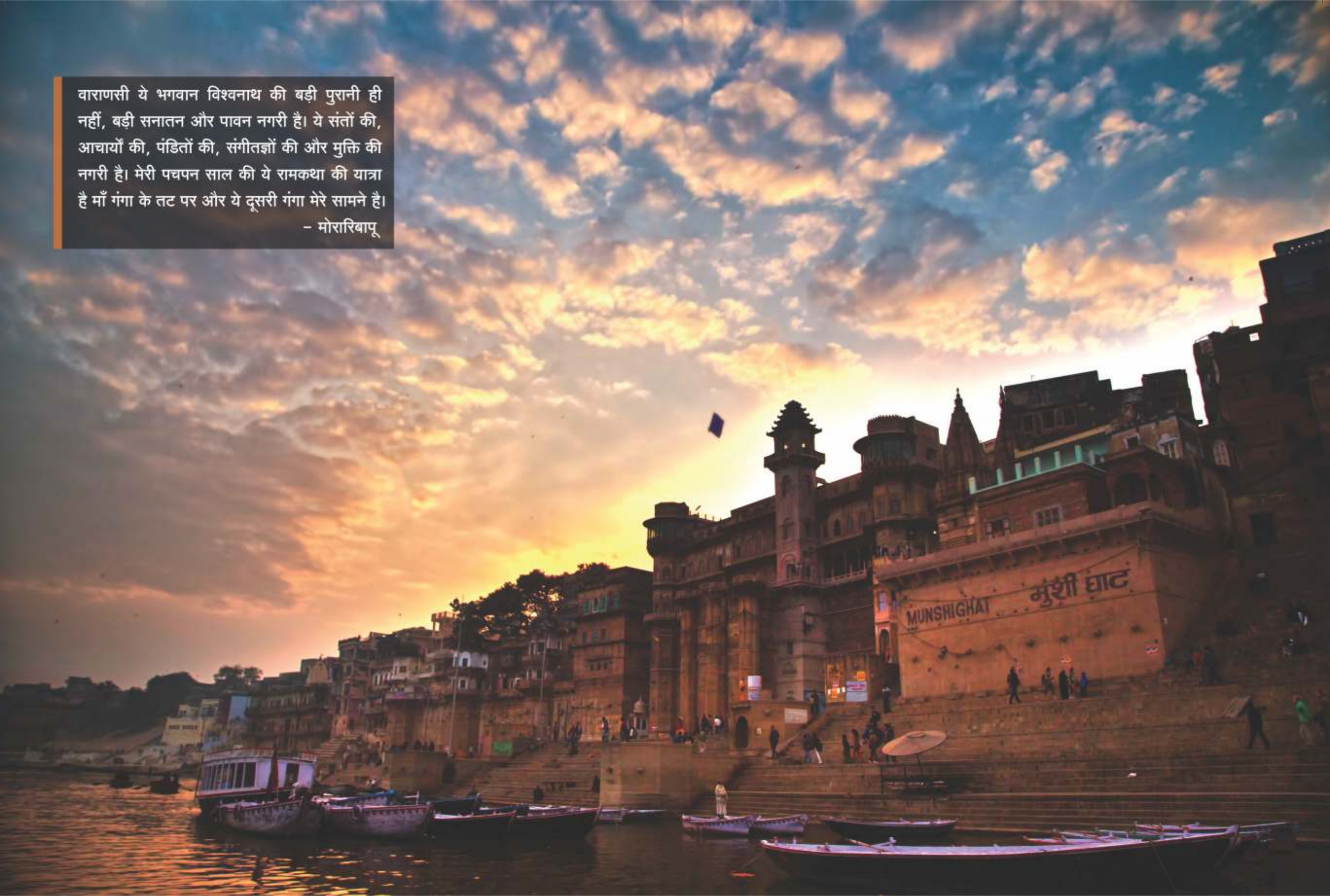

|| **रामकथा** ||
मानस-मधुमास

मोरारिबापू

वाराणसी (उत्तरप्रदेश)

दिनांक : २१-०३-२०१५ से २९-०३-२०१५

कथा-क्रमांक : ७७४

प्रकाशन :
मार्च, २०१६

प्रकाशक
श्री चित्रकूटधाम ट्रस्ट,
तलगाजरडा (गुजरात)
www.chitrakutdhamtalgajarda.org

कोपीराईट
© श्री चित्रकूटधाम ट्रस्ट

संपादक
नीतिन वडगामा
nitin.vadgama@yahoo.com

राम-कथा पुस्तक प्राप्ति
सम्पर्क-सूत्र :
ramkatha9@yahoo.com

ग्राफिक्स
स्वर अेनिम्स

प्रेम-पियाला

भगवान विश्वनाथ की पावन नगरी वाराणसी (उत्तरप्रदेश) में दिनांक २१-३-२०१५ से २९-३-२०१५ दरमियान मोरारिबापू की रामकथा 'मानस-मधुमास' सम्पन्न हुई। भगवान राम मधुमास में प्रकट हुए हैं और 'रामचरित मानस' का प्राकट्य भी मधुमास में हुआ है इसलिए रामनवमी के दिनों में आयोजित इस कथा को बापू ने सहज-स्वाभाविक रूप से 'मानस-मधुमास' पर केन्द्रित की। मध, मधुर, अमृत, मीठा, विश्राम, शांति, समाधान, शाश्वत मस्ती जैसे 'मधु' शब्दब्रह्म के कई अर्थों का संकेत बापू ने किया और 'ऋग्वेद' एवम् 'मानस' में निर्दिष्ट 'मधु' शब्द का विशिष्ट अर्थघटन भी किया।

'मधु' शब्द का अंत:करणीय कोश में-हृदय कोश में जो अर्थ होता है उसका विशद विवरण करते हुए बापू ने कहा कि यदि किसी सहज घटना से प्रसन्नता बढ़े तो समझो, हम मधुमास में जी रहे हैं। दूसरा, जिस घटना से वहम, वैर और व्याधि से निवृत्ति हो जाय, समझना हम मधुमास में जी रहे हैं। ऐसे ही जाने-अनजाने में हुई भूल का प्रायश्चित्तभाव हो; बिन मांगे किसी का आशीर्वाद मिलने लगे; किसी घटना से जीवन में पूर्णत: समाधान मिल जाय; अपने दोष का दर्शन होने लगे और उस दोषों की निवृत्ति का प्रयास किया जाय; धीरे-धीरे मनोवेग शांत हो जाय, भोगों को भोगने या छोड़ने के बजाय उदासीन वृत्ति का आविर्भाव हो सके तब समझना, हम मधुमास में जी रहे हैं।

मधु के संदर्भ में बापू ने सूक्ष्म स्तर से ऐसा निवेदन भी किया कि मधुलिप्त मत होना, लेकिन मधुसिक्त जरूर होना। लिप्तता आसक्ति है, सिक्तता 'रसो वै स:।' है। मधु और मद्य का भेद प्रकट करते बापू का ऐसा सूत्रपात भी रहा कि 'मद्य कुछ क्षणों के लिए मस्ती देता है, मधु जनम-जनम की मस्ती प्रदान रता है। तो प्रत्येक पल मधुमास में जीनेवाले बुद्धपुरुष की महिमा बापू ने इन शब्दों में की, 'बुद्धपुरुष के लिए मधुमास तीन सौ पैसठ दिन रहता है, जनमोजनम रहता है।' मधु पिलानेवाले शास्त्र 'मानस' का महिमागान भी व्यासपीठ ने ऐसे किया, 'हमारा मार्गदर्शन करती है 'रामचरित मानस' की चौपाई। यदि जीवन मनाना है, किसी साधक को आंतर्जगत को आलोकित करना है, तो ये शास्त्र पर्याप्त है। कोई और ग्रंथ हो; सब की अपनी-अपनी ऊंचाई है, लेकिन इतना सरल, इतना सहज और इतनी मधुरता से भरा हुआ शास्त्र कहां है, जो हम जैसे सामान्य कोटिवालों को भी मधु पिला रहा है।

'मानस-मधुमास' के माध्यम से यूं 'मानस' और वेदों के मधु विषयक विचारों के परिप्रेक्ष्य में बापू ने अपना निजी दर्शन व्यक्त किया।

– नीतिन वडगामा

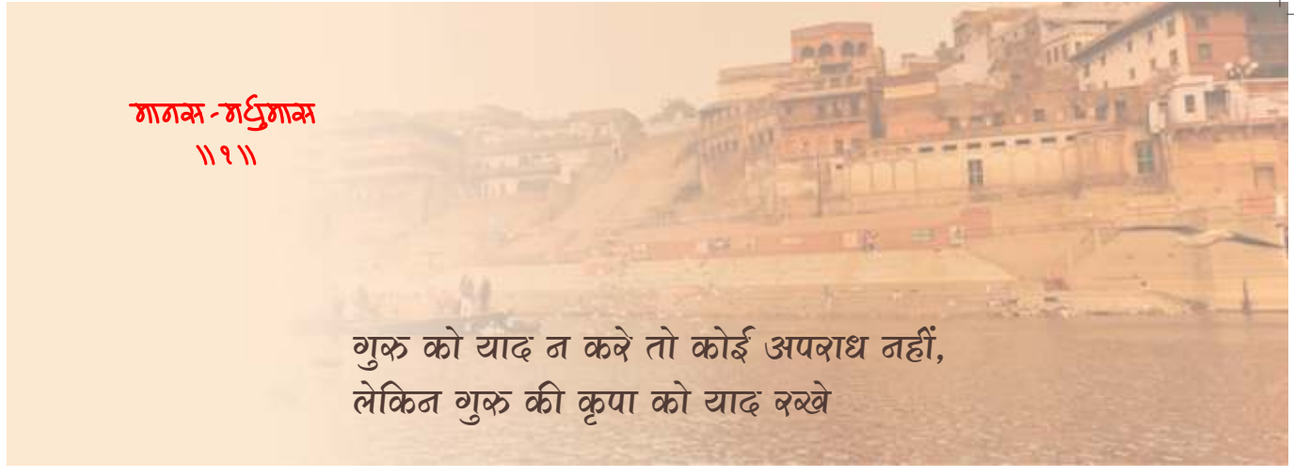

नौमि तिथि मधु मास पुनीता। सुकल पच्छ अभिजित हरिप्रीता ।।
नौमि भौम बार मधुमासा। अवधपुरीं यह चरित प्रकासा।।

बाप! फिर एक बार भगवान विश्वनाथ की बड़ी पुरानी नहीं, बड़ी सनातन और पावन नगरी में रामकथा गाने का अवसर प्राप्त हुआ उसको मैं भी अपना बहुत बड़ा सौभाग्य समझ रहा हूं। माँ गंगा के तट पर संकटमोचन हनुमानजी महाराज की छाया में और जहां पूज्यपाद कलिपावनावतार गोस्वामीजी की भी ये पुन्यस्थली, हर प्रकार से परम पावन भूमि जहां कुछ सालों के बाद फिर अनायास ये कथा आ गई है। मुझे भी खुशी है, आप को भी खुशी है।

कथा में जिनकी आशीर्वादक उपस्थिति है ऐसे सभी पूजनीय संतगण, आचार्यगण और यहां का राज-परिवार जो 'मानस'प्रेमी है, पूर्व महाराजा भी इतने ही चाह से और विनम्रता से रामकथा का श्रवण किया करते थे और उसी परंपरा में आज हमारे साथ आदरणीय काशीनरेश भी उपस्थित है। ये संतों की नगरी, आचार्यों की और पंडितों की, संगीतज्ञों की नगरी, ये मुक्ति की नगरी; किस भाषा में, किन शब्दों में इनका वर्णन किया जाय? मैं सभी चेतनाओं को याद करूं। हमारे आदरणीय और परम स्नेही दिनदयालजी जालानजी भाईजी, संतसेवी, सतसंगसेवी, समाजसेवी और तीर्थसेवी रहे। उसका परिवार केवल निमित्त बना है इस कथा में और उसके साथ जुड़े हुए सभी।

दो बातें की मुझे आप से क्षमा प्रार्थना करनी है। एक तो आज मैं देर से कथास्थान में पहुंचा, क्षमा करे। दूसरी बात का क्षमाप्रार्थी हूं कि मैंने कहा था कि काशी फिर जब कथा होगी तो मेरे मन में है और भाईजी का भी मनोरथ था कि रहीदासजी को केन्द्र में रखकर कथा कही जाय। और मेरे मन में भी था, क्योंकि पंद्रहवीं, सोलहवीं और सोलह के बाद ये जो सदी हमारे देश में चली उसमें जो संत महापुरुष हुए उसके बहुधा मत एक-सा रहा है। इसलिए मैं भी चाहता था कि मैं संत रहीदासजी को केन्द्र में रखकर 'मानस' के आधार पर उसका दर्शन करने की गुरुकृपा से विनम्र चेष्टा करूं। लेकिन मेरे मन में अभी ये प्रवाह फूट नहीं रहा! मैं क्या करूं? इसलिए मैं ये सब्जेक्ट अभी नहीं उठा रहा हूं इस कथा में। फिर कभी परमात्मा ने चाहा और जिन्दगी ने दगा न दिया तो कोशिश करेंगे कि कभी दूसरी बार आना हो तो रहीदासजी मुझे पुश करे। इसलिए मैंने कहा था फिर भी कथा में मैं वो विषय को केन्द्रस्थ नहीं बना पाया क्योंकि प्रवाह नहीं चल रहा, मैं क्या करूं? मेरी पचपन साल की ये रामकथा की यात्रा है, माँ गंगा के तट पर और ये दूसरी गंगा मेरे सामने है। मेरा पूरा अनुभव दृढ़ हो चुका है कि कथा मैं नहीं चलाता हूं, कथा मुझे चलाइ जा रही है। इसलिए अंदर से उठता नहीं तो क्या करूं? शायद योग नहीं बन रहा। एक शे'र सुनाउं, आप के पास समय है? तो, शे'र प्यारा है। कहो तो सुनाउं?

नजरों से पांव चूम लूं, या हाथों से पांव चूम लूं।
पाकीज़गी को देखकर मेरा दिल कश-मकश है।

- राज कौशिक

तो, रहीदासजी को नजरों से चूम लूं कि हाथों से पैर चूम लूं मैं! इस पाकीज़गी को देख दिल मेरा कश-मकश में है! शे'र है राज कौशिक का। और निर्णय नहीं हो पाया तो मैं क्या करूं? और ये जो दूसरा सब्जेक्ट उठा रहा हूं वो भी कहां निर्णय था? आकर भगवान बाबा विश्वनाथ के दर्शन किए। संकटमोचन हनुमानजी के पास गया। द्वार तो बंद थे! मुझे कहा कि बापू, अभी जायेंगे तो बंद होगा। तो मैंने कहा कि बंद होगा तो वो मुझे नहीं देख पायेगा, मैं तो देख लूंगा। 'नजरों से पांव चूम लूं।' मेरे मन में ये शे'र गुंज रहा था। मैंने कहा, एक बार हाजरी तो लगा दूं। मैं गया। माँ के दर्शन को आया आचमन के लिए। जब माँ के दर्शन किये, डूबकी लगाई तब ये सब्जेक्ट आया। और मैंने सोचा रामनवमी का पावन पर्व आ रहा था, दुर्गा और शक्ति की आराधना के दिन है। यहां 'मानस-मधुमास' सब्जेक्ट रहेगा। तो मधुमास क्या है, जिसका वेद में भी वर्णन है। तो क्यों ना हम माँ की कृपा से, बाबा विश्वनाथ के आशीर्वाद से, गोस्वामीजी की प्रेरणा से, संकटमोचन की कृपा से और आप सब की शुभ कामना से ये नव दिन 'मानस-मधुमास' पर सात्त्विक-तात्त्विक चर्चा करें? कथा का केन्द्रीय विषय होगा 'मानस-मधुमास।' जितना माँ गंगा के तट पर 'मानस' का गायन होगा, माँ गंगा ओर पवित्रता बक्षेगी।

नौमि तिथि मधु मास पुनीता।
सुकल पच्छ अभिजित हरिप्रीता ।।
नौमि भौम बार मधुमासा।
अवधपुरीं यह चरित प्रकासा।।

मेरे सद्गुरु भगवान की कृपा से मुझे जो अंत:करण की प्रेरणा होगी; 'मानस' मेरा ईष्ट ग्रंथ है इसलिए उसकी कृपा से संतों को सुना है, कहीं इधर-उधर वहां से कुछ पाया हो या सद्ग्रंथों का दर्शन किया हो और इन सब से जो कुछ पाया वो आप के साथ शेर करेंगे। आप से बातें करेंगे। ज्ञान और इतनी उंचाईवाली बात हमारे पास है भी नहीं और हमारी औकात भी नहीं। मैं सदैव रामकथा को प्रेमयज्ञ कहता हूं, इसलिए मेरे इस रामकथा के प्रेमयज्ञ में सभी काशीवासी सादर निमंत्रित है।

'मानस' में ऋतुओं का वर्णन है ही। आप जानते हैं, 'मानस' के सभी प्रसंगों के साथ छओं ऋतुओं का तुलसीदासजी ने जो निरूपण प्रस्तुत किया है। तो ऋतुओं का वर्णन है और ऋत का भी वर्णन है। 'ऋतं वदिस्यामि' की बात 'मानस' ने बहुत की है। और प्रसंगों के साथ ऋतुओं को जोड़ा है तुलसी ने। मास की बात भी तुलसी ने सांकेतिक रूप में जोड़ी है, इसलिए उसकी चर्चा विश्राम के लिए जरूरी है। भाव से गायेंगे।

परमात्मा अंत:करण चतुष्टय में प्रगट होता है अथवा तो है। कोई उसको प्रगट करे, ठीक है? 'ईश्वर: सर्वभूतानाम्' है। गोस्वामीजी कहते हैं-

अस प्रभु हृदय अछत अबिकारी ।
सकल जीव जग दीन दुखारी ।।

ब्रह्मतत्त्व, ईश्वरतत्त्व, 'गीता' का ईश्वर, 'रामचरित मानस' का प्रभु, उपनिषदों का ब्रह्म, जो कहो, अतं:करण में तो चारों चीज होती है। मन होता है, बुद्धि होती है, चित्त होता है, अहंकार होता है। तो परमात्मा कई लोगों के मन में प्रगट हुआ है लेकिन बड़ा नहीं हुआ। यद्यपि कहा गया है, ब्रह्म है वो बुद्धि से पर है। माना, फिर भी बुद्धि में भी परमात्मा प्रगट हो सकता है। बुद्धि के देवता ब्रह्म है तो वहां परमात्मा प्रगट होता है। मन के देवता चंद्रमाँ है। तो वहां भी परमात्मा प्रगट होने की संभावना है मानवीय मन में। हनुमानजी तो महोर लगाते हैं-

कह हनुमंत सुनहु प्रभु ससि तुम्हार प्रिय दास ।
तव मूरति बिधु उर बसति सोइ स्यामता अभास ।।

तो, परमात्मा अंत:करण में है अथवा तो प्रगट होता है। मान लो वह मन में भी प्रगट होता है। बुद्धि में भी प्रगट होता है। चैतसिक एकाग्रता में भी प्रगट होता है। भगवान विष्णु 'मानस' के अर्थ में चित्त है। और भगवान महादेव समग्र विश्व का अहंकार है।

अहंकार सिव बुद्धि अज मन ससि चित्त महान ।

अंत:करण में भगवान है पर बड़ा नहीं होता, उसके लिए तो भावजगत में आना पड़ता है। मथुरा मानी अहंकार की नगरी। कंस बड़ा अहंकारी है। तो कृष्ण अहंकार में जन्म ले सकता है अवश्य, लेकिन बड़ा तो गोकुल में ही हो सकता है। मथुरा ह्रास का केन्द्र बन सकता है लेकिन रास का केन्द्र तो श्री वृंदावन ही। परमात्मा बड़ा होता है भाव में, हृदय के प्रेम में। मन में प्रगट होगा; मन खराब नहीं है।

तोरा मन दर्पण कहलाये।

स्वामी रामतीर्थ अमरिका पर दिग्विजय करके आये, अद्वैत का अद्भुत झंडा लहराकर आये, बहुत बड़ा काम किया स्वामी रामतीर्थ ने। तो फिर उसको लगा कि हिन्दुस्तान जाउं और पहली बार काशी में जाउं, जो मेरी विश्व की धरती पर जो सनातन नगरी है। अनेक दृष्टि से इस नगरी अद्भुत है। तुलसी तो कहते हैं-

मुक्ति जनम महि जानि ग्यान खानि अघ हानि कर ।
जहँ बस संभु भवानि सो कासी सेइअ कस न ।।
जरत सकल सुर बृंद बिषम गरल जेहिं पान किय ।
तेहि न भजसि मन मंद को कृपाल संकर सरिस ।।

मेरे भाई-बहन, परमात्मा प्रगट तो कहीं भी हो जायेगा। और 'मानस' का एक सूत्र है-

हरि ब्यापक सर्बत्र समाना ।

और सर्वत्र में वैश्विक अंत:करण में मन भी है, बुद्धि भी है, चित्त भी है, अहंकार भी है। हरि सब जगह समान रूप में है। तो कहीं भी प्रगट होगा, बड़ा होगा कैसे? शंकर भगवान कहते हैं-

प्रेम तें प्रगट होहिं मैं जाना ।

तो, जनम तो लेते हैं मथुरा में, बड़े होते हैं गोकुल में। तो मेरे भाई-बहन, ईक्कीसवीं सदी में साक्षी बन बैठा परमात्मा हमारे दिल में बड़ा हो। और उसके लिए चाहिए भाव, इसलिए मेरी व्यासपीठ के पास कोई भाष्य नहीं है। जगद्गुरु शंकर ने कहना पड़ा-

भज गोविंदम्, भज गोविंदम् मूढ़मते ।

तो ये ज्ञानयज्ञ नहीं है, ये प्रेमयज्ञ है। तो मेरे भाई-बहन, आप सब की कथा है। पहले तो कथा दार्जिलिंग में थी। तो योग नहीं था। दिल्ही में न हुई। लेकिन यहां से इस नगरी से भेजा है जिसको दिल्ही, लोकशाही के बड़े बहुत पद पर जिसको भेजा है, वो भी तो गुजरात है! जहां उसने गंगा के शुद्धिकरण और पवित्र नगरी के उत्कर्ष की उद्घोषणा की है। क्यों न मैं भी एक आहुति डाल आउं? और हमारे काशी के वर्तमान नरेश, जब किल्ले पर कथा थी; पूर्णाहुति के दिन आप का आख़िरी वक्तव्य था, आप ने बहुत मौलिक विचार प्रस्तुत किये कि गंगा कभी अशुद्ध हो ही नहीं सकती लेकिन गंगा के किनारे वेद का उच्चारण थोड़ा कम हो गया है। ये वेद उच्चारण होने लगे तो गंगा का प्रवाह तीव्र गति से चलेगा। और तीव्र गति के चलने से कचरा अपने आप वो निकाल देंगे।

पहले दिन शास्त्र की महिमा सरल शब्दों में कहूं तो जिस शास्त्र पर चर्चा होनेवाली है, उसका ग्रंथ परिचय दिया जाय। 'रामचरित मानस' का क्या ग्रंथ परिचय देना? विदेश में भी पाठ हो रहे हैं। तो 'मानस' की महिमा अद्‌भुत है। एक शे'र है-

तेरी यादों से ये लाली मेरे चेहरे पे आई है।
सभी समझे कि अब तक रंग होली का नहीं उतरा।

हमनें तलगाजरडा में एक शंकर का मंदिर बनवाया, उसका नाम विश्वनाथ रखा ताकि मेरी लिंक यहां से टूटे ना। गंगाजी से तो है ही मेरी, सीधी-सी बात।

'रामचरित मानस' बिमल संतन्ह जीवन प्राण ।
हिन्दु आन को बेद सम जवन ही प्रगट कुर्आन ।।

ऐसा रहीमबाबा ने इस ग्रंथ पर फरमाया था। सात सोपान में इसका विभागीकरण जो किया है। अखंड है धारा ये लेकिन उसका सात विभाग किया है, सात सोपान है। वाल्मीकि 'कांड' कहते हैं, तुलसीजी 'सोपान' कहते हैं। आप जानते हैं, 'बालकांड', 'अयोध्याकांड', 'अरण्यकांड', 'किष्किन्धाकांड', 'सुन्दरकांड', 'लंकाकांड', 'उत्तरकांड।' प्रथम सोपान जिसको हम 'बालकांड' कहते हैं, उसमें सात मंत्रों में मंगलाचरण किया है। हमारा देश मंगल उच्चारण में तो मानता ही है। आदमी का उच्चारण मंगल हो। लेकिन पहले तो हम मंगलाचरण में ही श्रद्धा रखे। उच्चारण बाद में, लेकिन आचरण पहले हो। मंगल आचरण हो। मंगल आचरण के सात मंत्रों में तुलसी ने अपनी दिव्यगिरा, दिव्य वाणी, देववाणी में संस्कृत में उसकी स्थापना की। और हेतु-

स्वान्तः सुखाय तुलसी रघुनाथगाथा
भाषानिबन्धमतिमञ्जुलमातनोति।

श्लोक को लोक तक पहुंचाने के लिए तुलसी लोकभाषा में उतर आये। हमारे यहां आख़िरी व्यक्ति तक पहुंचने के लिए बुद्ध, महावीर कई ऐसे महापुरुष आये जिन्होंने प्राकृत में मूल तत्त्व समझाने की चेष्टा की।

'मानस' की उस समय जो भाषा बोली गई उसमें भाषा की एकसूत्रता रही; चाहे देव बोले, चाहे शंकर बोले, चाहे याज्ञवल्क्य बोले, चाहे बाबा भुशुंडि बोले। कहीं भाषाभेद नजर नहीं आता। त्रिलोक में चले, लेकिन कालान्तर में लोक प्रवाह को देखकर ये सामान्य जन इससे बिछड़ ना जाय। 'मानस' में हमारे चारों वक्ताओं की अपनी-अपनी वाणी का विशेष स्थान है। याज्ञवल्क्यजी कथा कहते हैं तो उसकी वाणी का मूल केन्द्र बिन्दु है विवेकवाणी। महादेव कथा कहते हैं तो उसकी वाणी का नाम है विश्वासवाणी। तुलसीजी स्वयं कहते हैं तो उसकी वाणी का केन्द्रबिन्दु है विरागीवाणी; बैरागी है ये। मेरे भाई-बहन, गोस्वामीजी ने अपने समय में सामान्य आदमी तक श्लोक पहुंचे इसीलिए लोकबोली में इस परम पावन ग्रंथ को उतारना 'स्वान्तः सुखाय' निर्णय किया।

स्वान्तः सुखाय तुलसी रघुनाथगाथा।

और फिर दूसरा संकल्प स्वयं आगे व्यक्त करते हैं-

भाषानिबन्धमतिमञ्जुलमातनोति।

मैं उसको भाषा में लाऊं। पांच सोरठें में तुलसीदासजी पंचदेवों की स्मृति कर रहे हैं। गणेश, सूर्य, भगवान विष्णु, भगवान शिव, माँ पार्वती, पंचदेवों की बातें जो जगद्‌गुरु आदि शंकराचार्य भगवान ने हम वेद को माननेवाले सनातन धर्मावलम्बीओं को कहा था कि पंचदेवों की स्मृति बनी रहे। ये मानो जगद्‌गुरु बाद कितना सेतु कर रहे हैं तुलसी! आप तो राम परंपरा में है और शंकराचार्य तो वो है लेकिन उसीके पवित्र मत को तुलसी 'मानस' के आरंभ में सेतु का संकल्प कर रहे हैं। और जब वंदन करने का उपक्रम शुरू हुआ तो सब से पहले गुरु की वंदना की और 'मानस' का पहला प्रकरण जिसको मेरी व्यासपीठ 'मानस-गुरुगीता' मानती है, उसकी कुछ पंक्तियां-

बंदऊँ गुरु पद पदुम परागा।
सुरुचि सुबास सरस अनुरागा।।

आप सब जानते हैं, 'मानस' का बिलकुल पहला प्रकरण है गुरुवंदना। गुरु महिमा का गायन किया। और गुरुपद की वंदना की। गुरु की चरणधूलि से नेत्रों को पवित्र करके मैं अब वो वचन कहने की ओर अग्रसर हूं। पहले नयन ठीक हो जाय तो बयन-बोलने का अधिकार ये देश देता है। आंख ठीक नहीं तो व्याख्यान ठीक नहीं। इसलिए पहले नेत्रों की पवित्रता पर बहुत बल दिया जाय। अद्‌भुत अतुलनीय गुरु परंपरा है हमारी। कई लोग मानते हैं, गुरु की जरूरत नहीं है। वो उनका मारग है, अवश्य। लेकिन हमारे जैसों को गुरु की बहुत जरूरत पड़ती है साहब! 'बिन गुरु ज्ञान कहां से पाऊं ।' लेकिन ये कलिकाल है, कभी-कभी गुरु से मिला हुआ ज्ञान चेला गुरु के सामने फेंकता है, तब गुरु मुस्कुराता है कि बच्चा अभी कच्चा है! ऐसे किस्से नजर के सामने आते हैं तब करुणा के सिवा ओर क्या करे यार! मैं एक सूत्र छोड़कर आज की कथा लिए चलता हूं। आप को गुरु याद न रहे तो चिंता नहीं। मैं दूसरी बार बोलूं, आप गुरु को याद न करे तो कोई अपराध नहीं। मैं त्रिसत्य करूं मेरे प्यारे श्रोता भाई-बहन, आप गुरु को अनदेखा कर दे तो भी कोई चिंता नहीं। लेकिन गुरु की कृपा भूलना मत। ईश्वर को याद न करो चौबीस घंटो तक कोई आपत्ति नहीं, लेकिन इसकी कृपा को याद रखें। हमारे गुजराती में गाया जाता है-

गुरु तारो पार न पायो...

हमारे जैसा ही गुरु होता है। गुरुकृपा असीम है। इसलिए सब से बड़ा गुरु विश्व में है विश्वनाथ।

तुम्ह त्रिभुवन गुर बेद बखाना।

रुद्राष्टक के एक-दो पद में-पंक्ति में वाङ्मय अभिषेक कर लिया जाय बाबा विश्वनाथ का-

निराकारमोंकार मूलंतुरीयं।
गिराग्यान गोतीतमीशं गिरीशं।।
करालं महाकाल कालं कृपालं।
गुणागार संसारपारं नतोऽहं।।
नमामीशमीशान निर्वाणरूपं
विभुं व्यापकं ब्रह्मवेदस्वरूपं।
निजं निर्गुणं निर्विकल्पं निरीहं
चिदाकाशमाकाशवासं भजेऽहं।

गुरुवंदना की। गुरुकृपा से रजमात्र कृपा से साधक की दृष्टि जब पवित्र हो जाय, दृगविवेक जिसको वेदांत कहता है, ये हो जाय तो पूरी सृष्टि ब्रह्ममय हो जाय। इसलिए आप जानते हैं कि 'मानस' में सब की वंदना शुरू होती है। ब्राह्मण देवताओं से, पृथ्वी के देवताओं से, वंदना आरंभ कर दी गई; जैसे पूरा जगत तुलसी को ब्रह्ममय दिखता है। इसलिए बाबा पावन पंक्ति शुरू करते हैं-

सीय राममय सब जग जानी।
करउँ प्रनाम जोरि जुग पानी।।

आंख पवित्र हो जाय तो दुश्मन भी वंदनीय लगने लगता है। और जब भी आंख पवित्र होगी श्रावक भाई-बहन, गुरुचरण कृपा से होगी; और कोई अंजन नहीं है विश्व में। गुरुकृपांजन एक मात्र उपाय है। सब की वंदना मेरे बाबाजी ने की। और महाराज दशरथजी, कौशल्यादि, जनकादि, सब भाईओं की वंदना करते-करते फिर बीच

> परमात्मा अंतःकरण चतुष्टय में प्रगट होता है अथवा तो है। वह मन में भी प्रगट होता है। बुद्धि में भी प्रगट होता है। चैतसिक एकाग्रता में भी प्रगट होता है। भगवान विष्णु 'मानस' के अर्थ में चित्त है। और भगवान महादेव समग्र विश्व का अहंकार है। अंतःकरण में भगवान है पर बड़ा नहीं होता, उसके लिए तो भावजगत में आना पड़ता है। मथुरा मानी अहंकार की नगरी। कंस बड़ा अहंकारी है। कृष्ण अहंकार में जन्म ले सकता है अवश्य, लेकिन बड़ा तो गोकुल में ही हो सकता है। मथुरा ह्रास का केन्द्र बन सकता है लेकिन रास का केन्द्र तो श्री वृंदावन ही। परमात्मा बड़ा होता है भाव में, हृदय के प्रेम में।

में एक वंदना नितांत आवश्यक वंदना आती है और वो है एक गुरु की वंदना-

महाबीर बिनवउँ हनुमाना।
राम जासु जस आप बखाना।।
प्रनवउँ पवनकुमार खल बन पावक ग्यान घन।
जासु हृदय आगार बसहिं राम सर चाप धर।।

हनुमानजी की वंदना गोस्वामीजी ने की है। तो मेरे भाई-बहन, नव-दिवसीय कथा में पहले दिन कथा का क्रम संक्षेप करते-करते हनुमंत वंदना तक लिये चलता हूं। इसलिए स्वाभाविक क्रम के अनुसार हनुमंत वंदना हम कर लें 'विनय' के पद की एक-दो पंक्ति से-

मंगल-मूरति मारुत-नंदन।
सकल अमंगल मूल-निकंदन।।
पवनतनय संतन-हितकारी।
हृदय बिराजत अवध-बिहारी।।

श्री हनुमानजी महाराज की वंदना गोस्वामीजी ने की। हम जैसों के लिए बहुत सिद्ध और शुद्ध साधना तुलसी ने बताई है 'हनुमान चालीसा।' भगवान शंकर के साथ जुड़ी चालीस चीज़ 'हनुमान चालीसा' में समाई है। उसकी चर्चा मेरी व्यासपीठ से करनी बाकी है। मैंने 'मानस-सातसो' में ये चर्चा का सूत्रपात कर दिया है। 'हनुमान चालीसा' में शिव के साथ जुड़ी हुई चालीस वस्तु समाई है। आप गिन लो। भगवान शंकर के पांच मुख; 'बिकट बेष बिमुख', पंचमुख में पांच, गिनते जाना; फिर एक मुख में कितनी आंख है? तीन; पांच मुख की कितनी आंख है? पंद्रह; पंद्रह और पांच कितना हुआ? बीस। तो पांच मुख; पंद्रह नेत्र; बीस हो गया। और भगवान की ज्योतिर्लिंग कितनी है देश में? बारह। मिला दो, कितने हो गये? बत्तीस। और शंकर है अष्टमूर्ति। कितने हो गये? चालीस। इति 'हनुमान चालीसा।' विश्व की आदि चालीसा 'हनुमान चालीसा' है। कई देवताओं की चालीसाओं का पाठ होता है। 'हनुमान चालीसा' सिद्ध भी है, शुद्ध भी है। धेर इझ नो डाउट!

तो बाप, 'हनुमान चालीसा' ऐसा एक साधकों के लिए मारग है। वो सिद्ध भी है, शुद्ध भी है। उसको आप ऐसे बोल जाय तो भी आनंद है। लेकिन उसको प्लीज़, सिरीयसली लेना। इसमें शंकर से जुड़ी चालीस वस्तु समाई है। जब प्रवाह चलेगा, आइ विल टेल यु। 'चालीसा' में वो अष्टमूर्ति कहां छिपी है और किन-किन शब्द पर तुलसी किसी न किसी ज्योतिर्लिंग का संकेत कर देता है? अद्‌भुत है 'हनुमान चालीसा।' इससे अष्ट सिद्धि मिले, नव निधि मिले ये तो ठीक है लेकिन 'हनुमान चालीसा' के अंत में क्या है?-

पवन तनय संकट हरन, मंगल मूरति रूप।
राम-लखन-सीता सहित हृदय बसहुं सुर भूप।।

आख़िर में परिणाम, मेरे हृदय में राम बसो; मानी मेरे हृदय में राम स्मृति रहे, राम स्मरण रहे। तो हनुमान की वंदना के पावन अवसर पर मैं आप को ये निवेदन करना चाहता हूं कि साधना तो बहुत है यार! अद्‌भुत है 'हनुमान चालीसा।' हनुमान की साधना से ये सीखना चाहिए कि जप करते-करते जम्प लग जाय। जप जम्प बन जाय। ये ये आदमी है।

बार बार रघुबीर सँभारी ।
तरकेउ पवनतनय बल भारी ।।

रघुवीर को संभारना जप है। जम्प आदमी को उर्ध्वगमन करा दे ये हनुमंत है। तो मेरे भाई-बहन, कोई गुरु मिल जाय तो जरूर बना लेना। लेकिन कोई ना मिले और निर्णय न कर पाये तो इसको मान लेना। ना दक्षिणा मांगे, ना हर साल आकर खड़ा रहे, ना कोई गड़बड़! और गुरु तो आश्रम में चला जाएगा, ये तो श्वास है हमारा, विश्वास है। हमें छोड़कर कभी जाएगा नहीं साहब! तो, श्री हनुमानजी महाराज की वंदना की। गोस्वामीजी उसको गुरु के रूप में देखते हैं-

जय जय जय हनुमान गोंसाई।
कृपा करहुँ गुरुदेव की नाई ।।

हनुमानजी की वंदना फिर सखाओं की वंदना की। फिर सीतारामजी की वंदना करने के बाद तुलसीजी रामनाम की वंदना करते हैं।

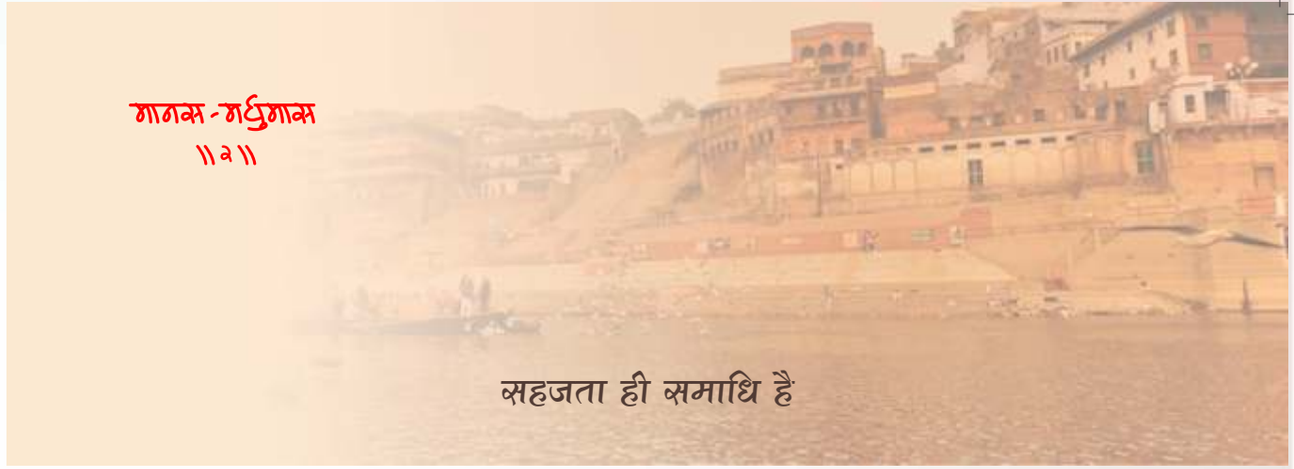

सहजता ही समाधि है

'मानस-मधुमास', इस नव दिवसीय रामकथा के केन्द्र विचार के रूप में मेरी व्यासपीठ ने पसंद किया है। प्रथम पंक्ति भगवान राम का अयोध्या में जब प्रागट्य हुआ उसकी उद्‌घोषणा करते हुए तुलसीदासजी ने गाई है। वो नवमी तिथि जिसको हम रामनवमी कहते हैं। मास है मधुमास पवित्र मास, शुकल पक्ष, अभिजित और दूसरी पंक्ति वैसे 'मानस' के क्रम में तो पहले आई है। वो है 'नौमि भौम बार मधुमासा।' नौमि तिथि, भौम वासर फिर मधुमास और अयोध्या में ये 'रामचरित मानस' को प्रकाशित करने की ये तिथि यानी भगवान राम के प्रागट्य की तिथि भी वोही और 'रामचरित मानस' के प्रागट्य की तिथि भी वोही कालभेद से, युगभेद से।

हमारे यहां पंचांग में पांच वस्तु की प्रधानता है-जोग, लगन, ग्रह, वार और तिथि। जहां पंचांग की गणना शास्त्रीय पद्धति से होती है तो इस तरह करीब-करीब उसका क्रम बना है। तिथि को अंत में रखी गई है। और खबर नहीं, गोस्वामीजी तिथि को प्रथम रखकर प्रधानता दे रहे हैं। ये कुछ सोचने पर मजबूर कर रहे हैं, क्यों? योग पहले होना चाहिए कि प्रभु के प्रागट्य का योग बना। लगन, ग्रह, नक्षत्र सब ठीक हुआ। जो पंक्ति हमने पसंद की है इस नव दिवसीय संवाद के लिए वहां तिथि प्रधान है। और ये उसके शायद कई कारण हो सकते हैं। पंडित-मानस में हो सकते हैं लेकिन संतों की अंत:करण की प्रवृत्ति की भी एक जगह होती है। लगता ऐसा है, शायद गोस्वामीजी आख़िरी आदमी तक पहुंचना चाहते है। आख़िरी आदमी योग में क्या समझेगा? जिसको मेरी व्यासपीठ ने वैश्विक नगर कहा है ये विश्वनाथ की नगरी और यहां उपेक्षा, आख़िरी व्यक्ति के प्रति कुछ दुर्भाव, वंचित समाज के प्रति ज्यादा दृष्टि न गई! जो हुआ और इसलिए इस भूमि ने बहुत बड़े क्रांतिकारी संत दिये जिन्होंने ये भेद की दीवारें तोड़ने का बहुत बड़ा वैश्विक काम किया इस भू भाग में।

मेरे पूज्यपाद गोस्वामीजी जाना चाहते थे आख़िरी व्यक्ति तक, क्योंकि उसका राम आख़िरी व्यक्ति तक जा रहा है। बहुत बड़ी मात्रा में जा रहा है। हम मूर्तिपूजक है; होना चाहिए। हमारा अधिकार है। श्रद्धा का मामला है, वो बरकरार रखा जाय, लेकिन इन्सान को अनदेखा क्यों किया जाय? आख़िरी व्यक्ति क्यों उपेक्षा का शिकार बने? तुलसी की ये वैश्विक दृष्टि थी।

'रामचरित मानस' में तो तुलसी को, एक सर्जक को, मर्यादा का जतन करना पड़ रहा है। 'मानस' की कथा में एक परंपरा-सी लगी है। एक रघुकुल रीत है। लेकिन 'विनय' के वचनामृत में तुलसी को कोई पाबंदी परेशान नहीं कर रही है। बहुत से रहस्य खोलती है 'विनय पत्रिका।' 'गीता प्रेस' के पास उसकी जानकारी होगी ही। प्रेस ने बहुत काम किया है तुलसी-साहित्य के प्रचार-प्रसार का गोरखपुर में। 'कवितावली', 'दोहावली', 'गीतावली' आदि का भाषान्तर युनेस्को ने किया, लेकिन 'विनय पत्रिका' पर युनेस्को रुका हुआ है। उसके भाव को अधिग्रहण करने के लिए शायद क्षमता नहीं हो! जब पुछा गया कि कब करेंगे? कब होगा? होगा भी, हो रहा है लेकिन जवाब तो यही मिलता

है कि 'विनय' में प्रवेश किसी संत की कृपा बिना मुश्किल लगता है। 'विनय' 'विनय' है और जो 'विनय' ना सीखे उसको 'मानस' में प्रवेश का अधिकार किसने दे दिया? मासुम गाज़ियाबादी का शे'र है-

उसे किसने इज़ाज़त दी गुलों से बात करने की?
बाग में जो गुल है, खिले हैं, नये हैं, ताज़े-तरोज़े हैं,
संप्रदायमुक्त हैं, हर प्रकार के वर्गमुक्त है, ऐसे जो फूल है।
उसे किसने इज़ाज़त दी गुलों से बात करने की?

सलीका तक नहीं जिसको चमन में पांव रखने का!
जिसको बगीचे में कैसे प्रवेश किया जाय उसका सलीका नहीं! जिसको 'विनय' का पता नहीं वो 'रामचरित मानस' में कैसे प्रवेश पायेगा? चाहिए 'विनय' का बल। रहस्य खोलती हैं 'विनय पत्रिका।' 'विनय' को समझने के लिए अति हरि कृपा चाहिए।

क्या जानता आख़िरी व्यक्ति योग के बारे में? इसलिए तुलसी ने प्रधानता पंचांग को दी लेकिन इन पांच अंग में प्रथम प्रधानता तिथि को दी। क्योंकि आख़िरी व्यक्ति को तिथि से लेन-देन होती है। तो इन दो पंक्तिओं में नौमी प्रधान है। तिथि की प्रधानता है।

नौमि भौम बार मधुमासा।
अवधपुरीं यह चरित प्रकासा।।

और राम प्रागट्य की महिमा तो किसके लिए नहीं है? लेकिन इससे भी अधिक महिमा मेरे लिए है रामनवमी की। उसी दिन 'रामचरित मानस' का प्रागट्य हुआ। राम प्रगट हुए हैं और हाथ में नहीं आता लेकिन ये ('रामचरित मानस') हमारे हाथ में है। और गुजराती में कहूं तो ईश्वर हाथवगो होवो जोइए। बाप! तुलसी की कथा सब के लिए है।

गुरु वंदना की, पृथ्वी के देवताओं की वंदना की लेकिन आख़िरी व्यक्ति तक तुलसी गये। कौन? गनिका, अजामिल, व्याघ्र, गीध, तुलसी वहां जाना चाहते थे, पहुंचे। वैरागी में वर्ण का भेद नहीं होना चाहिए। जब पंडित को समदर्शी कहा जाता है तो भेद नहीं चाहिए। वर्ना शास्त्र का छेद हम उड़ा रहे हैं! मूर्ति परम वंद्य है लेकिन इन्सान छुट ना जाय। आदमी अनचाहा रह न जाय। मैं कहता हूं मंदिर की मूर्ति की पूजा करो लेकिन ईन्सान से प्रेम करो। फ़राज़ का शे'र है-

पथ्थर की मूर्ति को पूज पूजकर मासुम रहे 'फ़राज़',
और हमनें एक ईन्सान को चाहा और गुनहगार हो गये।

मधुमास को केन्द्र में रखकर इस कथा का संवाद हम और आप करेंगे। तुलसी ने स्वयं चार संवाद की स्थापना की है। जहां रामकथा में वाल्मीकि के आधार पर और 'रामायण सत कोटि अपारा' है। उसमें जहां भी कुछ विवाद के प्रसंग आये, तुलसीदासजी ने छोड़ दिये हैं।

किसीने कुंडली की जागृति के बारे में पूछा है तो उसमें मेरी रुचि भी नहीं! आप जगो ना थोड़ा! मैंने बहुत काम किया है। कथा में लोग सोते ही थे, कम से कम जागते तो कर दिये! कुंडली को तो छोड़ो यार! लेकिन कथा में सोते नहीं है अब। अब जागरण आया है कि लोग जागते हैं। अब नई क्रान्ति आई है। यजमान के पूरे परिवार सब सुनेंगे। जहां जाऊं वहां ये जागृति आई। तो कुंडलिनी जागृति ये बड़ी योग की प्रक्रिया है। किसी के वचन से भी जाग जाती है, किसीकी दृष्टि से भी जाग जाती है। किसीके स्पर्श मात्र से भी जाग जाती है। अरे, छोड़ो यार, स्पर्श में धीरज होना जरूरी है, दृष्टि में आमने-सामने होना जरूरी है। नितांत आवश्यक है और वचन में भी तुम्हारें कान तो होना ही चाहिए। लेकिन सा'ब, बुद्धपुरुष के संकल्प से भी कुंडलिनी जागती है! ऐसा हमने सुना है। मेरा नरसिंह मेहता जागा था।

जागीने जोउं तो जगत दिसे नहीं,
ऊंघमां अटपटा भोग भासे।

नरसिंह ने कहा, अब तो ऐसा लगता है, 'ब्रह्म लटकां करे ब्रह्म पासे।' लेकिन मैं इतना जरूर कहूं कि भगवत्कथा से यदि पक्की रुचि और श्रद्धा है तो ऐसी बड़ी-बड़ी कठिन साधनाओं का परिणाम भी कथा में आ सकता है।

'बापू, परमात्मा ने प्रेम मां शुं फरक?' कांई नहीं। जिसस क्राईस्ट ने कहा था, प्रेम ही परमात्मा है और 'मानस' के रामभद्र कहते हैं-

रामहि केवल प्रेम पिआरा।
जानि लेउ जो जाननिहारा।।

विश्ववंद्य गांधी बापू ने कहा था कि परमात्मा सत्य है। अनुभव होते-होते उसने कह दिया कि सत्य ही परमात्मा है। जिसस कहते थे, परमात्मा प्रेम का स्वरूप है। फिर कहने लगे, प्रेम ही परमात्मा है। आज-कल मैंने बोलना शुरू किया है कि कबीर सा'ब ने कहा कि 'साधो सहज समाधि।' ठीक है; मुझे तो लगता है कि सहजता ही समाधि है। तुम्हारी और मेरी सहजता ही समाधि का पर्याय है। दो दिनों से मुझे ऐसा महसूस हुआ कि सहजता ही समाधि है। सहज बोलो, सहज गाओ, सहज सोओ, सहज खा लो, सहज रहो, सहज बैठो, सब समाधि है। और जगद्गुरु शंकर कहते हैं, सहज सो जाओ तो 'निद्रा समाधि स्थिति।' ये भी समाधि। और गोस्वामीजी 'सहज' शब्द पर बहुत बल देते हैं।

मेरे पास प्रश्न आता है, 'हनुमान चालीसा' का सर्जन पहले कि 'रामचरित मानस' का सर्जन पहले?' जो हो, ख़बर नहीं!

मुझको इस राह पे चलना ही नहीं,
जो मुझे तुझसे जुदा करती है।

- परवीन शाकिर

जो तर्क में फंसा दे और तर्कातीत का रस छुड़वा दे! मेरा कहना इतना जो मेरी समझ है कि 'हनुमान चालीसा' पहले कि 'रामचरित मानस' कि 'अयोध्याकांड' कि 'बालकांड' पहले, भगवान जाने! गुरु पहला, मैं इतना ही जानूं।

'आप कथा के साथ माला भी जपते हो; माला काफी वजनदार है! एक साथ दो काम कैसे कर लेते हो?' आप एक साथ कितने काम करते हो! मुझे दो काम करने दो ना! माला ठीक है सा'ब, कथा ही जप है। परमात्मा की कथा का गायन ही जप है।

तो, गोस्वामीजी ने तिथि को प्रधानता दी। और मधुमास। विनोबाजी का एक तारण है कि वेदों में 'मधु' शब्द चारसौ से पांचसौ के बीच आया है। उसने पक्की गिनती की। मधु मानी मधुरता। तुलसी ने भी अपने शास्त्र में 'मधु' शब्द को बहुत स्थान दिया है। यहां मधुमास की चर्चा है। मधुमास को हम ऋतुराज भी कहते हैं। मधुमास वसंत का महिना माना जाता है। इसमें सरस्वती पूजा की बहुत महिमा है। मधुमास के बारे में ये भी हकीकत है कि मधुमास राग का महिना है। क्योंकि वसंत का महिना है और वसंत कामदेव की सेना का नायक है। काम की जब बात आती है वहां ऋतुराज का पहला उपयोग करता है। ऋतुराज वसंत प्रगट कर देता है। किसी ऋषिमुनि की समाधि भंग करनी है या तो 'मानस' में शिव की समाधि का प्रसंग आया तब भी ऋतुराज प्रगट कर देना आदि-आदि प्रसंग; इसलिए साहित्य जगत में मधुमास को ऋतुराज भी कहते हैं। और ऋतुराज वसंत रागात्मिका संदेश ज्यादा देता है।

तो, भगवान राम इस मधुमास में प्रगट होते हैं। 'रामचरित मानस' का प्रागट्य मधुमास में होता है। तो क्या ये राग का संदेश देने के लिए हैं? ये प्रश्न उठता है, उसकी चर्चा जरूरी है। और साधना में राग तो ज्यादा से ज्यादा हटाया जाय। राग में न पड़े, रंगराग आदि-आदि। रागी होना ठीक नहीं, विरागी होना, ऐसी बातें हम सुनते हैं। और बात भी तो सही है। तो, राग के महिने में राम प्रगट हो जाय ये बड़ा क्रांतिकारी सूत्र है। राग के महिने में शास्त्र निर्मित हो जाय ये बड़ी रहस्यपूर्ण बात है। इसलिए उसकी चर्चा हम करेंगे। और दूसरी बात, जिसको साहित्यजगत के आचार्य-छात्र जो भी साहित्य का आदमी है वो जानते हैं कि राग का एक लक्षण है भय प्रगट करना। जिस आदमी में ज्यादा आसक्ति है, राग है, लगाव है, किसी चीज पर, वस्तु पर किसी पर भी हम को ज्यादा राग हो जाय, संग हो जाय, संग मानी आसक्ति। इसलिए हमारे यहां आया, संग आसक्ति रागात्मिक है इसलिए करना है तो संतसंग करो। करना है तो साधुसंग करो। करना है तो शास्त्रसंग करो। करना है तो सज्जन संसर्ग रखो।

मैं कहता हूं कि सब के साथ एक प्रमाणित डिस्टन्स रखा जाय। हम असंग हो जाय तो तो कहना ही क्या? असंगता अपने आप में एक बहुत बड़ी उपलब्धि

है। लेकिन व्याख्या सरल है। हम जैसे संसारी लोग तो संग में लिप्त है। तो भागवतकार हमें एक दिशादर्शन देते हैं कि जो राग संसार में हो वो ही साधु में हो जाय, उर्जा का प्रवाह बदल जाय।

जो चाबी ताले को खोलती है वो ही चाबी ताले को बंद भी कर सकती है। जो चाबी ताले को बंद करती है वो ही चाबी ताले को खोल देती है। जो संग बंधन में डालता है, जो संग राग पैदा कर देता है, राग में डूबो देता है वो ही संग कृष्ण अनुराग में भी परिवर्तित हो सकता है। और मेरे भाई-बहन, अनुराग जैसा कोई वैराग नहीं है। जिन्होंने अनुराग किया, जिन्होंने प्रेम किया वो व्रज की गोपांगना के समान कोई वैरागी हो सकता है? जिनके मुख से प्रभु का गीत निकलता है और त्रिभुवन पवित्र हो जाता है।

एक भाई ने एक भाई से पूछा कि कोई कपड़ा धोता है तो कितनी वस्तु चाहिए? तो, उसने जवाब दिया, एक तो साबुन; दूसरी मेहनत; तीसरा पानी चाहिए। तो कपड़ा शुद्ध हो सकता है। लेकिन कपड़ा है, मैला भी है, साबुन भी है लेकिन मेहनत न करे तो? साबुन ना घीसे तो? असंभव। चलो कपड़ा मेला है। साबुन भी है और धोनेवाला मेहनत भी कर रहा है लेकिन पानी नहीं तो? मेरे भाई-बहन, साबुन है ज्ञान; मेहनत है कर्मयोग। साबुन है ज्ञानयोग लेकिन पानी न हो तो? और भक्ति है दृगजल, नेत्र के आंसू। कलेजा कैसे शुद्ध होगा? लाख ज्ञान हो, साबुन है अवश्य; लाख आदमी कर्मयोगी हो, लेकिन भाव का जल ना हो तो? प्रेम-जल ना हो तो? इसलिए मेरे निवेदन है, परमात्मा मन में प्रगट हो सकता है। परमात्मा बुद्धि में भी प्रगट हो सकता है। परमात्मा अहंकार में भी प्रगट हो सकता है। चित्त में भी प्रगट हो सकता है लेकिन केवल प्रगट होकर रह जाता है। बड़ा तो गोकुल में ही हो सकता है, भाव में, प्रेम में। इसलिए जरूरी है जल।

तो, परमात्म तत्त्व फैलता है, विशेष रूप में जिसको नारदजी भक्तिसूत्र में 'प्रतिक्षण वर्धमानम्' कहते हैं, वो है भावजगत। तो मेरे भाई-बहन, राग बंधन है। मधुमास राग का महिना माना गया है। उसमें राम प्रगट हुए, 'रामायण' प्रगट हुई। मतलब ये 'सत एवं साधु सुकृतो।' ये उर्जा का रूपांतर कर रहा है। उसकी दिशा बदलनी है। तुलसी के अभिप्राय ये हो सकता है। आदमी असंग रहे उसको कोई भय नहीं रहता। अथवा तो संतसंग करे उसको भी भय नहीं रहेगा। शास्त्र का, हरिनाम का, परमात्मा का कोई भी संग भय निकाल देता है।

वालि को कुछ समय के लिए राम का संग हो गया तो वो कितना निर्भय, अभय हो गया? और सुग्रीव करीब-करीब भयभीत बना रहा। भगवान ने वालि को मारा तब भी आदमी निर्भय दिखता है। ललकारता है भगवान को, आपने मुझे क्यों मारा? आप धर्म हेतु आये हो। मेरी पत्नी कहती है, आप समदर्शी हो। कैसे भी ज्ञात-अज्ञात में संग हो गया है हरितत्त्व का। निर्भयता से बात कर रहा था। प्रभु ने कहा, चलो, उसको ज्ञान हो गया। चलो, तो शरीर को रख लो, तुझे अचल कर दूं।

> विश्ववंद्य गांधी बापू ने कहा था कि परमात्मा सत्य है। अनुभव होते-होते उसने कह दिया कि सत्य ही परमात्मा है। जिसस कहते थे, परमात्मा प्रेम का स्वरूप है। फिर कहने लगे, प्रेम ही परमात्मा है। आज-कल मैंने बोलना शुरू किया है कि कबीरसाहब ने कहा कि 'साधो सहज समाधि।' ठीक है; मुझे तो लगता है कि सहजता ही समाधि है। तुम्हारी और मेरी सहजता ही समाधि का पर्याय है। दो दिनों से मुझे ऐसा महसूस हुआ कि सहजता ही समाधि है। सहज बोलो, सहज गाओ, सहज सोओ, सहज खा लो, सहज रहो, सहज बैठो, सब समाधि है।

अचल करौं तनु राखहु प्राना ।

वालि ने इन्कार किया कि मुझे शरीर रखना नहीं है। प्रभु ने कहा, मुझे तो तेरे अभिमान को तोड़ना था; हो गई घटना।

बालि कहा सुनु कृपानिधाना ।

मैं मूढ़ नहीं, अब मुझे बे-फ़िक्र कहने दो, मुझे तन नहीं रखना है। लेकिन आप को मेरे तनय को रखना पड़ेगा। 'मानस'कार स्पष्ट लिखते हैं, तन नहीं मेरा तनय रख लो। एक बाप इससे ज्यादा अपनी औलाद के लिए क्या चाहता है? परमात्मा के पास यही तो मांगेगा कि हम रहे ना रहे, कुल-परंपरा में सतसंग बना रहे, स्मरण बना रहे, किसीका शरण बना रहे।

कोई परम का संग करने से अभय आता है, वर्ना साहित्यिक दृष्टि से राग-मधुमास भय देता है और भय से भगवान कैसे प्रगट होते? रामकथा प्रयोगशाला है। प्रयोग से घटना घटनी चाहिए और अवश्य घटना घट रही है। मेरी प्रसन्नता का विषय तो यही है कि ज्यादा से ज्यादा पढ़ी-लिखी युवानी कथा में आने लगी। सत्संग के प्रति रुचि जगी है। कोई भी कथा हो, जो बोले सो हरिकथा। अच्छा लेख, अच्छा प्रवचन, अच्छी कविता सब सत्संग है। जहां से शुभ संदेश प्राप्त हो वो सत्संग।

हमें किन-किन प्रकार के भय होते हैं? किस बात का भय? क्यों? भय का कारण है राग। जिस चीज़ से प्रति राग हो जाता है वो तो एक भय सदा इसके पीछे रहता है कि ये कहीं खो न जाय, छूट न जाय! वस्तु अच्छी लगे ये पर्याप्त नहीं, अभयता दे वो वस्तु होनी चाहिए। 'भागवत' में दैवी संपदा में अभय को ही प्रधानता दी है। बहुत बड़ी कमाई होती है, लेकिन उसके मन में एक भय रहता है, कहीं घाटा न हो जाय। कीड़नेप न हो जाय, लूंट न जाय। कितने प्रकार का भय है? कारण राग। राम का वचन है, मैं अभय कर देता हूं। एक बार मेरी शरण में आ जाय। पुकार कर ले बस! हम सब सोचे मेरे भाई-बहन, किसी भी चीज़ में राग पैदा होने से पहले भय तो ये है कि यदि वस्तु छूट जायेगी तो? दूसरा भय ये वो है मृत्यु का भय। कहीं बीच में ही मैं चला जाउं तो क्या होगा? ये मरण का भय। मृत्यु पर बोलना बहुत आसान है लेकिन आये तब बोलना कठिन है! मृत्यु का भय राग के कारण; राग मधुमास है इससे मृत्यु का भय हो सकता है लेकिन मरण का भय छूटेगा रामस्मरण से। जिन्होंने स्मरण किया; कबीर साहब कहते हैं-

शून्य मरे अजपा मरे अनहद हू मर जाय।
राम सनेही ना मरे कह कबीर समझाय।

मृत्यु के भय से आदमी तभी मुक्त हो सकता है, स्मरण जिसका बलवान। जप भी श्रम देगा। जप साधना है। साधना श्रम देती है लेकिन सुमिरन आदमी को निर्भय करता है। किसी की याद आते ही आंख में आंसू आ जाय; आदमी निर्भय होने लगता है क्योंकि अंदर भरा हुआ सब खाली हो जाता है।

हानि लाभु जीवनु मरनु जसु अपजसु बिधि हाथ ।

मरण विधाता के हाथ में है। व्यासपीठ कहती रहती है गुरुकृपा से कि विधाता को कहना चाहिए कि हे पितामह, मरण आप के हाथ में मुबारक, लेकिन मेरे ठाकुर का स्मरण तो मेरे हाथ में है, तुम्हें जो करना वो करना! मैं स्मरण छोडूंगा नहीं। राग के कारण तीसरा भय रहता है अपकीर्ति। और हमारे ऋषिमुनिओं ने-मनीषिओं ने अपकीर्ति को मृत्यु से भी भयंकर कहा है। तो मधुमास राग का है; अपकीर्ति होगी लेकिन तुलसी कहते हैं, यही मधुमास राम की लीला गाने से गानेवाले, सुननेवाले कीर्तिवान हो जायेंगे। धन्य धन्य हो जायेंगे।

मधुमास के कारण एक भय होता है महारोग का। जिस देह पर हमें इतना राग है, जिसको देहाभिमान कहते हैं, देहासक्ति कहते हैं। ये चौथा भय है महारोग।

जासु नाम भव भेषज हरन घोर त्रय सूल ।

जिसका नाम त्रिताप को मिटानेवाला है। तो महारोग एक भय है। कहीं राग के कारण किसीका अपराध ना हो जाय ये भी एक भय है। एक व्यक्ति के राग के कारण दूसरे व्यक्ति के अपराध पैदा न कर दे। दूसरे की उपेक्षा न हो

जाय ये अपराधबोध हो जाय। तो सब के भय भिन्न-भिन्न हो सकते हैं। और समानधर्मी, समान व्यवसायी, समान विद्यावाले लोगों को मेरे से दूसरा आगे न निकल जाय, ऐसी स्पर्धा का भय पैदा होता है।

तो 'मधु' ये बड़ा प्यारा शब्दब्रह्म है। वेद से लेकर आज तक और वल्लभाचार्य के पास पहुंचते तो 'मधुर' शब्द की वर्षा होने लगी! उसका पूरा स्तोत्र है 'मधुराष्टक।'

अधरं मधुरं वदनं मधुरं नयनं मधुरं हसितं मधुरम्।
हृदयं मधुरं गमनं मधुरं मधुराधिपतेरखिलं मधुरम्।।

वेद भी 'मधु' शब्द को आदर देते हैं लेकिन 'मधु' शब्द खास का नहीं होना चाहिए, मास का होना चाहिए। राम सब के हो गये। मधुमास आम आदमीओं का मास है। राम आम लोगों के हो गये। शबरी तक, केवट तक, बंदर-भालु तक, पथ्थर तक, असुरों तक, सब तक प्रभु पहुंचते हैं। तो उसको पवित्र भी कहा है और साहित्य की दृष्टि से रागात्मक भाव भी प्रगट करता है। यही मास ऋतुराज के कारण अनर्थ भी करता है और दिशा बदल दें तो हमारे भीतर की अयोध्या में राम का प्रगटीकरण कर सकता है।

कथा में कल श्री हनुमानजी की वंदना की। क्रम में सीतारामजी की वंदना हुई। उसके बाद नौ दोहें में नाम की वंदना की है। पूर्णता का प्रतीक नौ है और पूर्ण शून्यता का प्रतीक है। ये जो शून्य है ये भारतीओं की देन मानी गई और है। और नौ दोहें में बहत्तर चौपाईओं में भगवान के नाम की महिमा है -

बंदऊ नाम राम रघुबर को।
हेतु कृसानु भानु हिम कर को।।

गोस्वामीजी कहते हैं, प्रभु के नाम को प्रणाम करता हूं। राम के कई नाम है। सब नाम सम है लेकिन इनमें से मैं रामनाम की वंदना और महिमा करता हूं। रामानुजाचार्य कहते हैं, हर चीज़ का पहला नाम राम है। सब नाम उसके हैं। कोई कृष्ण कहे, कोई दुर्गा कहे, कोई अल्लाह कहे; जो कहे, क्या फ़र्क पड़ता है? कबीरसाहब कहते हैं-

कबीरा कुआ एक है, पनिहारी अनेक।
बरतन सब न्यारे भये, पानी सब में एक।

रामनाम सर्जक है, रामनाम पालक है, अनावश्य का संहारक है। रामनाम होगा तो विषम परिस्थिति में भी आदमी को विश्राम प्राप्त होगा। गोस्वामीजी कहते हैं, त्रेतायुग में स्वयं रामजी ने जो-जो लीलाएं की थी वो आज कलियुग में नाम स्वयं लीला करके हमें कृतकृत्य कर देती है। रामनाम आदमी की दुराशाओं को निर्वाण देता है। मारता नहीं, निर्वाण कर देता है। राम ने जो किया वो नाम करेगा। त्रेतायुग में अहल्या उद्धार किया। आज कलियुग में हमारी बुद्धि पाषाण जड़वत् हो गई है, तो चेतना प्रदान करता है हरिनाम। त्रेतायुग में राम ने भगवान शिव का धनुष्य तोड़ा। आज कलियुग में प्रभु का नाम हमारे अहंकार को तोड़ता है। हमारे कर्तृत्व के अहंकार को हरिनाम ही तुड़वा देगा। भगवान राम ने त्रेतायुग में शबरी, गीध, सुग्रीव आदि को अपनी शरण में रखा। आज राम ने कई गरीबों का निर्वाह किया।

चारों युग की साधना पद्धति बिलग-बिलग है। सतयुग में सर्वसामान्य साधना थी ध्यान। लोग ध्यान करते थे। त्रेतायुग में पौराणिक वैदिक यज्ञ करते थे। द्वापर युग में लोग पूजा-अर्चन घंटों तक करते थे ईष्ट का और उसको परम पद की फलप्राप्ति होती थी। कलियुग में वो केवल हरिनाम से प्राप्त होता है। जो आप का ईष्ट का नाम हो। जिसको कोई बुद्धपुरुष मिल जाता है उसके माँ-बाप नहीं मरते। माँ-बाप का अभाव सद्गुरु रहने नहीं देता। वैसे 'दोहावली' में एक दोहा है तुलसी का-

जथा भूमि सब बीजमय नखत निवास अकास।
राम नाम सब धरममय जानत तुलसीदास।।

पूरी पृथ्वी बीजमय है। नहीं बोया वो भी बारिस होते उगता है। आकाश सर्वत्र नक्षत्रमय है, वैसे ही रामनाम सब धरममय है। राम सांप्रदायिक तत्त्व नहीं है, राम सार्वभौम शब्दब्रह्म है। विषम परिस्थिति में भी राम आया तो विश्राम और राम निकल गया तो विष के सिवा कुछ नहीं बचेगा। ऐसी है रामनाम की अतुलनीय महिमा।

भीतरी प्रसन्नता आने लगे तब समझना हम मधुपान कर रहे हैं

मधु का एक अर्थ होता है मधुर, मीठा और मधु का अर्थ होता है मध भी। मधु का एक अर्थ होता है विश्राम भी। मधु मानी विश्राम। अन्य संदर्भ में मधु का एक अर्थ प्राप्त होता है शान्ति भी। हम मधुमास पर केन्द्रित है। आंतरिक विकास और आंतरिक विश्राम के लिए ही ये सब संवाद है। जो भी बोला जाता है हमारी पावन परंपरा में बोला गया है; व्यास का जूठा ही बोला जाता है। गोस्वामीजी ने भी यही बात कहते हुए कहा कि 'क्वचिदन्यतोऽपि' भी हो सकता है। हेतु है केवल स्वान्तः सुख, भीतर का विश्राम।

आप कथा में प्लीज़, इसलिए मत आईए कि नव दिन की कथा सुने और आप को स्वर्ग मिल जाय! ऐसा इरादा है तो प्लीज़ मत आया करे। आप कथा में इसलिए न आये कि आप को पुन्य लाभ होगा। होगा ही लेकिन छोड़ो ये कामना ही। आप कथा में इसलिए कृपया न आये कि आपको पुत्र, समृद्धि, तरक्की हो; पद, प्रतिष्ठा मिले। कथा में यदि आप सच्चे अर्थ में आते हैं तो आप का एक ही इरादा हो कि मेरे अंतःकरण की विशेष विशुद्धि हो और मैं विश्राम को उपलब्ध होऊं, जो विश्राम तत्त्वतः मेरा स्वभाव है। जो शांति तत्त्वतः हमारा स्वभाव है। उस पर कुछ परतें लग गई है उसको खोलने के लिए कथा में आये।

एक देहात में चले जाईये। एक आदमी को रामकथा के बारे में पूछो तो वो भी रामकथा एक मिनट में बता देगा कि ये कथा है। यहां के भारत के कण-कण में रामकथा है। विश्व में रामकथा का जितना विस्तार, प्रचार है मेरी जानकारी में अन्य किसी ग्रंथों का नहीं है। काशी है ये। सब बैठे हैं गंगाजल पीकर, सभी मस्त है! तो, आप की मस्ती को संभालना मुश्किल है। खुद की मस्ती को खुद ही संभाला करो। आप के भाव को नमन करता हूं। लेकिन इस जयजयकार में जीवन के उर्ध्वगमन के सूत्र छूट ना जाय। प्रयोग में छोटी-सी गलती हो जाय तो प्रयोग असफल हो जाता है। मेरे निवेदन को याद रखे, ये प्रयोगशाला है; ये मधुशाला है; मधुमास की कथा है। हमारे गोपालदास 'नीरज' सा'ब ने ओशो के दरबार में कभी गाया था ये-

ये मस्तों की प्रेम सभा है, यहां संभलकर आना जी।

तो बाप, कुछ सूत्रात्मक चर्चा संवाद सूर में होती है। तो 'मधु' शब्दब्रह्म है उसके कई अर्थ है-मीठा, मधु, विश्राम, समाधान भी, मध भी। और जब वेद ने ये शब्द चुना है तो उसका अर्थगांभीर्य बढ़ जाता है।

तो रामकथा किससे अनभिज्ञ है? दुनिया के कई देशों में गुरुकृपा से, शास्त्रकृपा से घूमने का मेरी व्यासपीठ को अवसर मिला है। हर कोई ने किसी न किसी रूप में रामकथा पाई है। लेकिन कंबोडिया में हमारे भारत से वहां जो राजदूत के रूप में नियुक्त है पटनायकजी, उसने बड़ी प्यारी बात बताई कि बापू, यहां कंबोडियावाले हनुमानजी की शादी कराते है! जनता है, कुछ भी कर सकती है! एक शे'र है; जूनागढ़ का शायर है, गुजराती है, उर्दू पर बहुत काम कर रहा है, भावेश पाठक।

ईश्क जिसको फ़ितूर लगता है।
वो अभी खुद से दूर लगता है।
उसने कोई सफाई दी ही नहीं,
आदमी बेकुसूर लगता है।

हनुमानजी सफाई नहीं देंगे कि आप ने मेरी शादी क्यों करवाई? समाज में सेतु होना चाहिऐ। विश्ववंद्य गांधी बापू तो कहा करते थे कि जिसको 'रामायण' और 'महाभारत' का जरा भी ज्ञान नहीं उसको हिन्दुस्तानी होने का अधिकार नहीं। ये हमारी परंपरा का संस्कार है, साहब! तो कथा तो आप सब जानते हैं। तो, सार की बातें करें। आंतरिक विश्राम के लिए ये प्रयोग है। ये धर्मसभा नहीं है, ये प्रेमसभा है। ये मोहब्बत की मेहफिल है। गौर से सुने भी।

'मधु' शब्द के अंत:करणीय कोश में, हृदयकोश में, भाषा भिन्नता के कारण अनुभव के कारण भी लोग बिलग-बिलग अर्थ करते हैं। मेरे गोस्वामीजी भी 'मधु' शब्द की आवृत्ति करते रहते हैं। मधु का एक अर्थ मेरे श्रावक भाई-बहन, होता है विश्राम भी। हमें मधु प्राप्त हो, मानो एक अर्थ में हमें विश्राम प्राप्त हो। जैसे 'पायो परम विश्राम।'

अब एक प्रश्न उठता है कि हम बोल दे हमें विश्राम प्राप्त हुआ, हमें मधु प्राप्त हुआ, हम मधुशाला के सदस्य हो गये। यद्यपि मधुशाला का सूत्र रखना चाहता हूं जो मुझे अनुकूल पड़े हैं। शायद आप को अनुकूल पड़ जाय। हम जब ये कहे कि हमें मधु प्राप्त हो गया है। मधु मानी अमी; अमृत भी। यहां चातुर्य की बात नहीं है। आप कैसा भी अर्थ निकाल सकते हैं। 'मधु' शब्द का आप व्यापारी अर्थ भी कर सकते हैं।

यहां तात्त्विक-सात्त्विक चर्चायें हमारे अंत:करण को ओर विशुद्ध करे, विश्राम करे जो हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है। हमें मधु प्राप्त हुआ ये हम तब कह सकते हैं कि हम मधुमास को एन्जोय कर गये, हमने रामनवमी मना ली। जब हमें किसी घटना से किसी कारण किसीके संग से, किसीके वचन से, किसीकी दृष्टि से, किसीके स्मरण से, किसीकी वारता से, बातचीत से अंदर बिना प्रयास प्रसन्नता आने लगे तब समझना मधु पाया। मैं शास्त्र की ऊंचाई पर जाना नहीं चाहता क्योंकि काशी में ऐसी शास्त्रीय बातें करना ठीक नहीं क्योंकि यहां शास्त्र की आख़िरी ऊंचाई तक छूआ गया इस भूमि पर। इसलिए मैंने पहले दिन कहा, यहां जो हुए है, है और होनेवाले है उन सभी चेतनाओं को मेरा प्रणाम। दीक्षित दनकौरी-

शायरी तो फ़कत बहाना है।
अस्ल मकसद तुझे रिझाना है।

हमारी जो जन्मजात प्रसन्नता दबी हुई है वो प्रगट हो। और राधेश्याम कहते हैं, वो वर्तमान में जीये बिना नहीं हो सकती। जब भीतरी प्रसन्नता शुरू हो जाय तो समझना हमने मधुपान किया है। मधुपान का अर्थ वो मद्यपान मत करना, प्लीज़! अपने मौलिक होश में ला दे वो मधुपान, बेहोशी में ला दे वो नहीं। आदमी बेहोशी में कोई ताल-वाद्य बजायें, गाना गाये तो लय चुक हो सकता है। आदमी होश में हो। आदमी बेहोश में नृत्य करे तो स्टेज की मर्यादा छोड़ सकता है। होश में रहना।

मुझे बोलते-बोलते प्रसन्नता आने लगे, आप को सुनते-सुनते प्रसन्नता आने लगे तब समझना, कोई भी मास हो, मधुमास है। तुलसी ने सब मास का नाम लिखा है। भादों का लिखा है, सावन का लिखा है, चैत्र मास का लिखा है। मधुमास मानी चैत्र मास। माघ महिना का नाम लिखा है। सभी मास के कोई न कोई देवता है। जनउक्ति में और शास्त्रउक्ति में, दोनों जगह कोई न कोई देवता हमने नियुक्त किया है। बारह मास में तीन साल के बाद एक अधिक मास ड़ाल देता है। उसको हम पुरुषोत्तम मास कहते हैं। वो विष्णु का मास माना जाता है। सावन मास शंकर का महिना है। अथवा तो यूं कहो, शिवभक्तों का सावन मास है। भादों मास पितृओं का मास है। हम भादों में पितृश्राद्ध करते हैं। असल मास है कृष्ण का आसो, जिसमें शरदपूनम आती है। रास आता है। और कृष्ण महारास का मालिक है। कार्तिक मास विष्णु का भी माना गया। नारायण का मास माना गया। मार्गशीर्ष मास कृष्ण की विभूति माना गया। पोष मास एक अर्थ में ब्रह्मा का मास माना गया। माघ मास प्रयाग का माना गया। फाल्गुन प्रह्लाद का माना जाता है। चैत्र तो मेरे ठाकुर का महिना है ही। वैशाख नानकजी का कह दूं? बुद्ध का कह दूं? आप कह सकते हैं। तो किसी भी मास में हम हो लेकिन जब किसी भी स्वाभाविक क्रिया से प्रसन्नता आने लगे तो समझना हम मधुपान कर रहे हैं।

अच्छे अर्थ में मेरे पास निवेदन आ रहा है, 'बापू, आप विश्राम करे।' लेकिन करना न करना मेरी मौज! मैं स्वतंत्र हूं। मैंने कल किसन को कहा, मैं रोटी खा रहा हूं तेरी नहीं, मेरे प्रारब्ध की खा रहा हूं। मेरे नसीब की, तलगाजरडा की मिट्टी की जलेबी खा रहा हूं। अपनी मौज, किसीको मिलूं ना मिलूं! आदमी प्रसन्न रहे। हमारी गंगासती कहती है, 'जेने आठे पहोर आनंद।' और मेरे अनुभव मैं कहूं तो आठे पहोर आनंद उसको होता है, 'जेने सदाये भजननो आहार।' हरि भजो। आचार्य चरण मधुसूदन सरस्वती ने कहा, 'हे जीव, हे साधक, 'व्यर्थ कालत्वं।' तुम्हारा समय मत बीताओ। जीवन एन्जोय करने जैसा है। ये बड़ी प्यारी पृथ्वी पर हमें जनम मिला है। और इतना तो सोचो, भारत में जनम मिला है और आप इससे भी ज्यादा गौरव ले सकते हैं कि काशी में जनम मिला। ये जीवन बड़ा मधुर है, बड़ा मीठा है, जीने योग्य है।

अक्लिष्ट वृत्ति से फिलम देखो तो भी व्यासपीठ को आपत्ति नहीं, दुर्वृत्ति जिससे पैदा न हो। संगीत के लिए, नृत्य के लिए, भारतीय कला के लिए, विद्या के लिए आप कोई फिलम देखे तो मैं मना नहीं करता। मेरे मना करने से कोई रहेगा भी नहीं! मैं क्यों बीच में फिलम की पंक्ति गा लेता हूं? मुझे नहीं पता है कि धर्मजगत खफ़ा होंगे? धर्मजगत की नाराजगी हो सकती है। अब तो कोई नाराज़ है ही नहीं, सवाल ही नहीं है। अब तो बड़े-बड़े महात्मा लोग भी कहते हैं, बापू, टी.वी. पर सुनते हैं, पूरी कथा हुई आपने पिक्चर का एक भी गीत नहीं गाया! सा'ब, क्यों करता हूं ये? अच्छी बात जिससे मिले वो ले लो। वेद कहता है, हमें दशों दिशाओं से शुभ विचार प्राप्त हो। राशिद का उर्दू का फेमस शे'र है-

राशिद किसे सुनाउं गली में तेरी गज़ल,
उनके मकां का कोई दरीचा खुला न था।

सब बंधियार बैठे हैं और बाउल लोग चिल्लाते-चिल्लाते फकीर लोग गाते-गाते निकलते हैं लेकिन लोगों ने अपनी खिड़कियां बंद रखी है! जहां से शुभ मिले, लो। मधुसूदन सरस्वती का शब्द है, 'व्यर्थ कालत्वं।' सब करो, शील से, मर्यादा से। भारतीय गौरव बढ़े, गंगा को और तीव्र गति से बहने की इच्छा हो, उनके आनंद की वृद्धि हो ऐसे सब कुछ करो। और रात को आप फिर सोचो, नींद न आती हो और कोई काम ना हो तब आप के पास पांच मिनट निकले तो आचार्य चरण कहते हैं, उसमें हरिनाम भजो। कोई आचार्यों ने हमारे पास ज्यादा मांग रखी ही नहीं है। आचार्य प्रेक्टिकल है। आप ध्यान करो, योगा करो, चिंतन करो, आप कोई अच्छी किताब पढ़ो, आप कुछ गुनगुनाओ, रियाझ करो, नृत्य करने की इच्छा है, तो ठुमका लगाओ। प्रसन्नता बढ़नी चाहिए। राजेन्द्र शुक्ल कहते है-

निषेध कोईनो नहीं, विदाय कोईने नहीं.
हुं शुद्ध आवकार छुं, हुं सर्वनो समास छुं.

यदि नेगेटिव सोच से तुम्हारी आनंद की वृद्धि होती है, तो करो! लेकिन हुई नहीं। रहीम का दोहा है-

रहीमन रोष ना कीजिए, कोई कहे क्यूं है?
तो हंसकर उत्तर दीजिए, हां बाबा यूं है।

हंसो, खेलो, ध्यान करो। लेकिन ये कठिन है। इसलिए ऐसे समय हरिनाम का आश्रय करे। क्या मैं युवा पीढ़ी को कह दूं, धंधा बंद कर दो? प्रेक्टिकल हो जाओ। वेश छूटे तो कोई चिंता नहीं, वेद नहीं छूटना चाहिए। किसी भी महिने में हम जीते हैं लेकिन यदि किसी भी सहज घटना से प्रसन्नता बढ़े तो समझो, हम मधुमास में जी रहे हैं। परख अपने आप करो।

बाप, सूत्र एक, मधु का अनुभव करो। दूसरा, हम सब तभी समझें कि जब हमारी कुछ समस्याओं का अपने आप निराकरण होता चले तब समझना, अब

मधुपान का समय आया। हमारे यहां एक शब्द है 'मधुबेला।' बड़ा प्यारा शब्द है। लोग कहते हैं, मधुबेला में काम करो। मधुबेला में कोई सगुन देखने की जरूरत नहीं। क्योंकि हमारे जीवन में कई समस्यायें है। एक जहाज में हम सब है। दृष्टि का भेद हो सकता है। विचार का भेद हो सकता है। दृष्टिकोण का भेद हो सकता है। राज कौशिक का शे'र है-

कभी हंसती कभी रोती कभी लगती शराबी-सी।
मोहब्बत जिनमें रहती है वो आंखें और होती है।

दृष्टि बिलग-बिलग हो सकती है। समस्याओं की पंक्तियां खड़ी है।

एक सूत्र प्रसन्नता; दूसरा निराकरण; तीसरा सूत्र है निवृत्ति। जब जीवन में निवृत्ति आने लगे, निवृत्ति मानी ये नहीं कहता कि समाज सेवा से या धंधा से निवृत्त कर दो। निवृत्ति का मेरा अर्थ है रोगनिवृत्ति। दूसरा है वहेम निवृत्ति और तीसरा है वैरनिवृत्ति। किसीके साथ आप का संघर्ष चल रहा हो उसकी निवृत्ति हो जाय। किसी पर वहेम हो गया हो निवृत्ति हो जाय। और आप को अपने पर वहेम हो गया कि मुझे ये रोग है। इन तीन प्रकार के वहेम, वैर और रोग से निवृत्ति जिस घटना से हो जाय, समझना हम मधुमास में जी रहे हैं। और सोचो मेरे भाई-बहन, वहेम ने किसको नहीं पकड़ा? शरीर तो रोगालय है। तुलसीदास 'उत्तरकांड' में लिखते हैं, रोग सब में है। पहचानता है कोई विरला। शरीर के रोग तो तुरंत पहचान जाते हैं लेकिन जो मानसिक रोग की 'मानस' ने चर्चा की है, ये सब में है।

काम बात कफ लोभ अपारा ।
क्रोध पित्त नित छाती जारा ।।

वहेम किसी पर हुआ, किसी घटना पर हुआ, जैसे निवृत्त होने लगे। मानसिक, शारीरिक रोग भी चलो, और किसीके साथ यदि संघर्ष हो उससे मुक्ति आने लगे तब समझना हम मधुमास में जी रहे हैं।

प्रसन्नता, निराकरण, निवृत्ति और चौथा सूत्र है मधुमास का वो है प्रायश्चित्त। जाने-अनजाने में किसीका दिल दुःख गया, किसीको हमने ठेस पहुंचाई, किसीका छिन लिया, नेटवर्क बनाकर किसीको शीशे में बंद कर दिया, फिर सतसंग के प्राप्य विवेक से जब अपराधभाव कुबूल होने लगे और प्रायश्चित्तभाव शुरू हो जाय कि मैंने जिसका किया उसके पास जाकर एक बार कह दूं कि भूल हो गई, समझना मधुमास में तुम्हारा रहना शुरू हो चुका है। तुलसी का 'विनय'का पद-

तू दयालु, दीन हौं, तू दानि, हौं भिखारी।
हौं प्रसिद्ध पातकी, तू पाप-पुंज-हारी।।

गोस्वामीजी कहते हैं, सेवक और श्वान समान होता है। मैं तेरा सेवक होकर कभी-कभी भोंकता हूं, कभी-कभी काटता हूं, इस सेवक को माफ कर दीजिये। प्रायश्चित्त मधुमास के निवास की लायकात। प्रसन्नता, निराकरण, निवृत्ति, प्रायश्चित्त और पांचवां बिन मांगे किसीका आशीर्वाद मिलने लगे। दुआओं से कोई भर दे। आशीर्वाद मधुमास के योग्य हमें बना देता है तब समझना हम मधुजीवी हैं। हम मधुबेला में जी रहे हैं। हम परमात्मा के असली मधुशाला के सदस्य हैं।

आगे का सूत्र है सौभाग्य। जब हमें लगे कि मेरे जैसा किसीका सौभाग्य नहीं है कि इतनी व्यस्त दुनिया में भी मुझे भगवतकथा सुनने की रुचि जग रही है।

बड़े भाग पाइब सतसंगा ।
बिनहिं प्रयास होहिं भव भंगा।

जब हम सौभाग्य महसूस करे। ये सभी सूत्रों को ठीक करने के लिए आप को 'विनय पत्रिका' को पढ़ना पड़ेगा। ये सभी रहस्यों का उद्घाटन बिना 'विनय पत्रिका' असंभव है। बिना 'विनय' की विद्वत्ता कोई असर नहीं रख पाती। सौभाग्य का अनुभव हो। मैं कह सकता हूं, अपने को जब देखता हूं व्यासपीठ पर तब मुझे लगता है, मेरे समान सौभाग्यवाला कोई नहीं है विश्व में। क्या आप ये मेहसूस नहीं करते? भारत में जन्म और 'रामचरित मानस' जैसा शास्त्र मिला और लायक नहीं थे तो भी कोई ऐसा बुद्धपुरुष का हाथ सिर पर आ गया इससे बढ़िया सौभाग्य की निशानी कौन हो सकती है? जब अपने सौभाग्य का अनुभव करने लगे, समझो मधुशाला के सदस्य है।

हरि! तुम बहुत अनुग्रह कीन्हो।
साधन-धाम बिबुध दुरलभ तनु,
मोहि कृपा करि दीन्हों।।

मनुष्यता देवताओं को भी दुर्लभ है। आदि शंकराचार्य ने 'विवेक चूडामणि' के आरंभ में कहा कि जगत में तीन वस्तु दुर्लभ है मनुष्यत्व, मनुष्यदेह में मनुष्यता और किसी बुद्धपुरुष का संसर्ग ये तीन दुर्लभ है। कई कलि के प्रभाव के कारण हमारी मानसिक कलुषितता इतनी बढ़ गई है तब मेरा अनुभव ऐसा कहता है कि कई बुद्धपुरुष निकले हैं लोगों की ख़बर पूछने के लिए। इस मौके को पकड़ लो। आज कई कबीर घूमते होंगे, कई बुद्धत्व लिए बुद्धपुरुष घूमते होंगे। मुझे लगता है, कई कैलासी चेतना घूमती रहती है। 'मानस' में क्या लिखा है?-

जेहि दिन राम जनम श्रुति गावहिं ।
तीरथ सकल तहाँ चलि आवहिं ।।

मुझे आपने बुलाया ये करम नहीं तो क्या है? मेरा मरतबा बढ़ाया ये करम नहीं तो क्या है? करम मानी कृपा। अपने सौभाग्य का अनुभव करना मधुमास में जीना है। आगे का सूत्र है, किसीकी घटना से जीवन में पूर्णतः समाधान आ जाय, समझना मधुमास है। एक तसल्ली, एक डकार, बस हो गया। आगे का सूत्र है मेरे भाई-बहन, जब अपने दोष का अपने को ही दर्शन होने लगे और अपने द्वारा ही इस दोषों की निवृत्ति के प्रामाणिक प्रयास साधक करने लगे तब समझना, मधुमास शुरू हो गया। गुणीजन दोष में भी गुण दिखेगा और दुर्गुणी किसीमें गुण होगा तो भी दुर्गुण देखेगा। ये मानसिकता है हम सब की! सुर आदि संतों ने यही तो कहा था। मेरे पास ऐसी समस्या आती है। कोई कहता है बापू, क्रोध बहुत आता है। मेरा एक जवाब है, आप को ठीक लगे तो जेब में रखना फिर हृदय में रखना। हम कहीं जाते हैं तो कोई कमरे में हमें कोई रखता है। एक दिन में ही ख़बर हो जाती है कि पंखे की स्वीच कहां है? छ महिना साधना करनी पड़ती है? लाइट की स्वीच ये है। डीम लाइट की ये हैं। हम सीख लेते हैं। मुझे समझ में नहीं आता कि अस्सी साल से हृदय में रहे हैं लेकिन क्रोध की स्वीच कहां है, हम पहचान नहीं पाते! काम की स्वीच कहां है? ईर्ष्या की स्वीच कहां है? इसलिए बुद्धपुरुष की जरूरत पड़ती है कि कोई हमें स्वीच बता दे। गुजराती में भजन है-

कूंची मारा गुरुजीने हाथ, सद्गुरुने हाथ;
कूंची मळे तो ताळां मारां उघडे रे...

हमारा दोष हम को दिखाई दे और हम ही उनका इलाज शुरू करे तो और धीरे-धीरे जिन दोषों ने हमें दुःख दिया है, उन दुःखों से निवृत्ति प्राप्त होने लगे और अच्छा अनुभव होने लगे तब समझना, हम मधुमास में जी रहे हैं।

आगे का सूत्र, मनोवेग धीरे-धीरे शांत होने लगे। आशादेवी एक ऐसी देवी है कि सेवन करो तो दुःख देती है, छोड़ दो तो सुख देती है। सभी देवीओं से बिलग देवी आशा नाम की देवी! 'विनय' का सूत्र, विश्वास भी जड़ता है। भरोसा भी जड़ता है। आशा भी जड़ता है। ये तीन जड़ता है मुझमें हे हरि, 'यह बिनती रघुवीर गुसाईं।' आप कल्पना तो करो, बिलकुल विपरीतसूत्र! जिस विश्वास को तुलसी शंकर का पद देते हैं-

भवानीशङ्करौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ ।

तो, विश्वास जड़ है? 'भरोसा' पवित्र शब्द, वो जड़ है? जड़ है, जड़ है, जड़ है; वर्ना तुलसी क्यों लिखते-

और आस-बिस्वास-भरोसो, हरो जीव-जड़ताई।
यह बिनती रघुबीर गुसाईं।

भरोसे की इतनी बड़ी बात लिखी 'मानस' में और 'विनय' में उसका छेद उड़ाया! ये जड़ता है, मूढ़ता है। मेरे जीवन की ये तीनों जड़ता को ठाकुर, तुम हरो। क्या अर्थ करेंगे? किसी भी आशा लेकर भरोसा करो तो ये भरोसा भी जड़ है। किसी प्रकार की आशा तो जड़ है, है, है। क्योंकि हमारा भरोसा किसी न किसी आशा पर खड़ा है। ये तुलसी ही कह सकता है। विश्व को चाहिए एक विश्व मानुष। जगत को वैश्विक मानुष चाहिए। तुलसी विश्व मानुष है। अर्थ समझ में न आये तो बड़े-बड़े की धार्मिकता की नीव हिल सकती है। यहां इस विश्वास को जड़ कहा जहां इस विश्वास पीछे हमारी कोई आशा हो।

पुष्टि परंपरा में सुरदास ने गाया, भरोसा हो तो एक वस्तु उनके साथ जोड़ दी जाय। दृढ़ भरोसा हो। आशामुक्त भरोसा, आशामुक्त विश्वास, निरपेक्ष विश्वास, भरोसो। भरोसा एक पल में परिणाम लाता है, आशामुक्त हो तो। आशा के कारण हम 'भरोसा' और 'विश्वास' जैसे पवित्र शब्द को कलुषित न करे! जगद्गुरु शंकराचार्य कहते हैं अपने स्तोत्र में, 'यथा योग्यं तथा कुरु।' 'मानस' का भरत कहता है-

जेहि बिधि प्रभु प्रसन्न मन होई।
करुना सागर कीजिअ सोई।।

जीवन में कोई ऐसा स्थान रखो, जहां कोई आशा के बिना हम जाये। वर्ना ये जड़ता है। मन इच्छाओं का बंडल है। इच्छायें गई, मन गया। ये उपदेश नहीं, सहचिंतन है। विनोबाजी कहते हैं, सह चिंतन होना चाहिए। वेद तो पहले से कहता रहा, 'संगच्छध्वम्' संग चलो, संग बोलो।

> जब भीतरी प्रसन्नता शुरू हो जाय तो समझना हमने मधुपान किया है। मधुपान का अर्थ वो मद्यपान मत करना, प्लीज़! अपने मौलिक होश में ला दे वो मधुपान, बेहोशी में ला दे वो नहीं। आदमी बेहोशी में कोई ताल-वाद्य बजायें, गाना गाये तो लय चुक हो सकता है। आदमी होश में हो। आदमी बेहोश में नृत्य करे तो स्टेज की मर्यादा छोड़ सकता है। होश में रहना। मुझे बोलते-बोलते प्रसन्नता आने लगे, आप को सुनते-सुनते प्रसन्नता आने लगे तब समझना, कोई भी मास हो, मधुमास है। किसी भी मास में हम हो लेकिन जब किसी भी स्वाभाविक क्रिया से प्रसन्नता आने लगे तो समझना हम मधुपान कर रहे हैं।

मन का आवेग जब सीमित होने लगे समझना, हम मधुमास में जी रहे हैं। भोगों को देखकर भोग भोगने की इच्छा हो जाय अथवा भोग को त्याग करने की इच्छा हो जाय ये दोनों से बचकर सद्गुरु की कृपा से सतसंग प्राप्य विवेक से भोगों के अवसर पर न छोड़ना, न पकड़ना लेकिन जो उदासीन हो जाय, समझना वो मधुमास में जी रहा है। उदासीन; न छूना, न छोड़ना। कोई घटना घटी और बैराग हो गया। छोड़ो यार, परिस्थिति और घटना से जन्मे तो वैराग दो कोडी का; बैराग विवेक से प्रगट हो तो सो टच का सोना है। एक अवस्था होती है साधक की, अपने आप छूटने लगता है। पत्ता पक जाता है तो डार से टूट जाता है। कोई भी संकेत बिलग कर दे। मधुपान उसने किया है जिनमें इन उदासीनवृत्ति निष्पन्न होती है। कठिन तो बहुत है। तुलसी का युग है त्रेतायुग ये मधुयुग है। उसकी साल है सोलहसौ। तुलसी का मधुमास कौन है? तो-

नौमि भौम बार मधुमासा।

चैत्र मास तुलसी का मधुमास है और फिर मास में तिथि तो नौमी तिथि। तुलसी के लिए नौमी तिथि मधु तिथि है। मंगलवार ये तुलसी का मधुबार है। अभिजित तुलसी का मधु नक्षत्र है। हमारे यहां नक्षत्र एक सत्ताइस दिन के बाद आता है। फिर वोही नक्षत्र आने में सत्ताइस दिन लगेगा। लेकिन एक अभिजित नक्षत्र ऐसा है, रोज आता है। राम रोज आना चाहिए। सत्ताइस दिन के बाद राम आये, घाटे का सौदा है। अभिजित का अर्थ होता है अपराजेय नक्षत्र। उजाला तब है, जब राम आ जाय। तो तुलसी का अभिजित नक्षत्र मधुनक्षत्र है। और तुलसी की मधुबेला मध्याह्न समय है।

मध्यदिवस अति सीत न धामा ।
पावन काल लोक बिश्रामा ।।

ऐसी बेला न शीत, इसमें न ठंडी भी है, न इतनी गरमी भी है। तुलसी समन्वय करते हैं दोनों का। इस देश ने भगवान कृष्ण को पूर्ण अवतार कहा है। विनम्रता से कहूं, राम भी पूर्णावतार है। कृष्ण चंद्र है और चंद्र सोलह कला

से पूर्ण होता है। इसलिए कृष्णचंद्र सोलह कला से पूर्ण है; और राम सूर्य है और सूर्य बारह आदित्य का वो है तो बारह कला से वो पूर्ण है। सूर्यवंश में आये है तो बारह कला से पूर्ण और चंद्रवंश में आये है तो सोलह कला से पूर्ण है। दोनों पूर्ण अवतार है। राम पूर्ण ब्रह्म है। राम का रूप पूर्ण है, राम का नाम पूर्ण है, राम की लीला पूर्ण है और राम का धाम पूर्ण है। शिव का नाम पूर्ण है, रूप पूर्ण है और महादेव की 'मानस' में वर्णित लीला भी पूर्ण है और काशी उसका धाम भी पूर्ण है।

निराकारमोंकार मूलंतुरीयं।
गिराग्यान गोतीतमीशं गिरीशं।
करालं महाकाल कालं कृपालं।
गुणागार संसारपारं नतोऽहं।।

संतों से सुना है कि वाल्मीकि 'रामायण' के आदि कवि है लेकिन शिवजी 'रामायण' के अनादि कवि है। योग्य समय आने पर हृदय में रखा हुआ 'रामचरित मानस' पार्वती के सामने गाया वो ही 'रामचरित मानस' समय आने पर महादेव ने कागभुशुंडि को दिया और भुशुंडि ने गरुड के सामने उसका गायन किया। वहीं से ये 'रामचरित मानस' बिलकुल धराधाम पर आया, तीर्थराज प्रयाग में याज्ञवल्क्यजी से भरद्वाजजी ने पाया। तुलसी कहते हैं, मैंने ये 'रामचरित मानस' की कथा मेरे गुरु से सुनी, लेकिन चेतना जाग्रत नहीं हुई थी इसलिए मैं रामकथा के रहस्य उस समय समझ नहीं पाया। बार-बार सुनाई तब जाके थोड़ा समझ में आया। तब मैंने भाषाबद्ध करने का सोचा ताकि मेरे मन को प्रबोध होई। सोलहसौ इकतीस साल, नौमि तिथि, मधुमास, अयोध्या में 'रामचरित मानस' का प्रकाशन शुरू हुआ। कब पूरी हुई कौन जाने! 'हरि अनंता हरि कथा अनंता।' 'मानस' को मान सरोवर का एक रूपक बनाया। 'मानस' के चार संवाद घाट बनाया। एक ज्ञानघाट, जहां शिव-पार्वती के बीच में संवाद। दूसरा उपासनाघाट, जहां कागभुशुंडि और गरुड के बीच में संवाद। तीसरा कर्मघाट, तीरथराज प्रयाग में याज्ञवल्क्य और भरद्वाज के बीच में संवाद। चौथा घाट अपने मन के साथ और संतों के साथ जिसको संतों ने कहा शरणागति का घाट।

ईष्ट प्रेम, संत का संग और श्रद्धा का संगम ये तीन हो तो दूर मानस-सरोवर भी हमारे निकट आ जाय। वो मानसरोवर में हंस रहते हैं, ये मानसरोवर में परमहंस रहते हैं। शंकर जैसे परमहंस ये मानसरोवर की कथा सुनते हैं। तुलसी ने शरणागति के घाट पर अपने मन को श्रोता बनाकर कथा कहना आरंभ किया। एक बार पूर्ण कुंभ हुआ। भरद्वाज ने याज्ञवल्क्य से रामतत्त्व क्या है ये जिज्ञासा की। याज्ञवल्क्य महाराज भरद्वाज की जिज्ञासा से प्रसन्न हुए। आप ने अज्ञानी की तरह मुझे प्रश्न पूछा है! 'मानस' की महिमा का गायन किया। बोले, महाराज, आप ने रामकथा पूछी; मैं पहले शिवकथा सुनाउं। कथा राम की है, आरंभ शिव से करते हैं। यही तो समन्वय है। पांच चरित्रों का अमृत है 'रामचरित मानस।'

जो सत्यनिष्ठ है वह प्रेमनिष्ठ होगा ही और जो प्रेमनिष्ठ है वह करुणानिष्ठ होगा ही

'मानस-मधुमास', जो इस नव दिवसीय रामकथा का केन्द्रीय विचार है जिसकी हम संवादी सूर में सात्त्विक-तात्त्विक चर्चा कर रहे हैं। कथा का मूल केन्द्रबिन्दु मधु है। वेद का प्यारा शब्द है। पूज्यपाद गोस्वामीजी ने भी 'मधु' शब्द का बहुत विपुल मात्रा में प्रयोग किया है। संदर्भ भेद से उसके कई अर्थ है। वेद में जहां 'मधु' शब्द आया है; वो मंत्र ऋग्वेद का है; मैं लेकर आया हूं उसका एक-एक टुकड़ा मैं बोलूं, आप भी बोलिएगा। पहले तीन शब्दब्रह्म ले रहा हूं, एक साथ वो बिलग करके आप को बता दूं ताकि बोलने में हमें ज्यादा सुविधा रहे क्योंकि वेद एक अर्थ में बहुत क्लिष्ट है, जटिल है। उसका पूरा भाष्य करना विद्वानों के लिए भी सुलभ नहीं है। कोशिश की लोकमान्य तिलक ने; इससे पहले कोशिश की पंडित प्रवर सायनाचार्य ने, कितने-कितने आचार्यों ने! विनोबाजी ने भी बहुत उपकार किया। और काशी में तो कहना ही क्या? आज ही अखबार में मैंने पढ़ा कि काशी के कुछ पालि भाषा, प्राकृत, संस्कृत इन सभी के प्रकांड विद्वानों का सन्मान राष्ट्रपति भवन में महामहिम राष्ट्रपति महोदय ने किया है। स्वागत है; अभिनंदन। होना चाहिए।

यहां तो वेद ही वेद है। ये गंगा में जो पानी बहता है ये वेद बहता है और तरंगें है वो चौपाईयां है। ये मेरा व्यक्तिगत अभिप्राय है। आप को कुबूल होने की जरूरत नहीं। मैं आप को स्वतंत्र छोड़ देता हूं। ओशो ने कभी कहा था कि कोई आप को सलाह दे तो जरूर आदर के साथ सुनियेगा क्योंकि लोग सलाह देने में बहुत उदार है! और इतनी ही उदारता से उसको सुनियेगा क्योंकि वो भरकर आया है, तुम्हारे पास खाली होकर जाना चाहते हैं! होने दो लेकिन निर्णय अपनी निजता से लेना। शास्त्र सलाह देता है, समाधान अंत:करण देता है। शास्त्र सदैव सिद्धांत देता है। समाधान तो अंदर बैठा कोई बुद्धपुरुष प्रदान करता है। आईये, भगवान वेद का स्मरण करें।

मधु वाता ऋतायते मधु क्षरन्ति सिन्धव:। माध्वीर्न: सन्त्वोषधी:।।
मधु नक्तमुतोषसो मधुमत्पार्थिवं रज:। मधु द्यौरस्तु न: पिता।।
मधुमान्नो वनस्पतिर्मधुमाँ अस्तु सूर्य:। माध्वीर्गावो भवन्तु न:।।

बहुत से वेदज्ञ आचार्यों ने उस पर अपना भाष्य प्रस्तुत किया है। यद्यपि कहा नहीं जा सकता, 'तदपि कहे बिनु रहा न कोई।' उसका जो सार है, भावार्थ है, उसका अर्क जो है, उसको मैं और आप साथ में समझने की कोशिश करें। बहुत महत्त्व का शब्द है, प्राण है वो है 'ऋतायते।' ऋत मानी सत्य। 'सत्यं वदिस्यामि। ऋतं वदिस्यामि।' आदि-आदि जो वेदमंत्र आते हैं। आचार्यों ने कहा है, ऋतायत मानी संसार में जो सत्यनिष्ठ है।

मेरे दादाजी ने मुझे 'रामचरित मानस' दिया था तब ये खास कहा था कि बेटा, सरलता से ही बोलना; सरलता से ही बातें करना। जब कुछ ऐसा लगे, ऐसा माहौल बने, ऐसी बज़्म हो उस समय सूक्ष्मता को यदि तू भी ठीक से पकड़ सके और समाज भी पकड़ सके तब सूक्ष्म बातें करना; तब तक प्रसंगों में, घटनाओं में उपर-उपर के सार को समझने की कोशिश करना और जिक्र भी करना।

'ऋतायते' मतलब सत्यनिष्ठ; और हम ऋतुराज की चर्चा कर रहे हैं। मधुमास मानी ऋतुराज, वसंत। ऋतुराज ये ऋतु भी है और उसमें 'ऋत' शब्द भी है। मानो सत्य का परिचायक है। तो यहां जो वेद भगवान ने कहा, जो सत्यनिष्ठ है उसके लिए सर्वत्र मधुर ही मधुर है; आनंद ही आनंद है; विश्राम ही विश्राम है; शांति ही शांति है; मस्ती ही मस्ती है; मौज ही मौज है। ये उनका प्राण है, आत्मा है, इस मंत्र का। लेकिन मैं सरल हो जाय इसलिए दो शब्द और भी जोड़ना चाहूंगा कि सत्यनिष्ठ के साथ-साथ जो प्रेमनिष्ठ है और प्रेमनिष्ठ के साथ जो करुणानिष्ठ है। सत्य, प्रेम, करुणा का एक फेमिली प्लानिंग है।

सत्य के एक पुत्र का नाम है अभय। वेद कहता है, जहां-जहां बाह्य-अंदर हर जगह हमें अभय प्राप्त होता है। लेकिन अभय आयेगा कैसे? सुनो, सत्य होगा तो अभय आयेगा। और अभय बड़ा हुआ तो उसके घर बेटी होती है उसका नाम है शांति। अभयं कुरु ॐ शांति: ॐ शांति:। अभय के बिना कोई शांति पाया है? वेद पैसा नहीं मांगता, वेद धन-दौलत नहीं मांगता, यदि वेद मंत्र में कहीं ऐसी बातें आप को मिले भी तो भी किसी और संदर्भ में वो कुछ कहना चाहता है। स्थूल से सूक्ष्म की और लेने का उसका स्तुत्य प्रयोग है। वेद कहता है, हम अभय हो। ज्ञान भयमुक्त हो।

गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टागोर कहते हैं, गोस्वामीजी बैठे थे गंगा के तट पर और एक स्त्री जिसका पति मर गया था तो घाट पर बैठी रो रही थी। रवीन्द्रबाबु कहते हैं, तुलसीदासजी राम स्मरण करते-करते जा रहे थे। महिला को रुदन करती देख वो पूछते हैं कि 'माताजी, क्या हुआ?' बोली, 'मेरे पति की मृत्यु हुई।' तो बोले, 'कुछ मुश्किल है? मैं कुछ मदद करूं?' बोली, 'आप में मुझे वैराग बल लगता है। मुझे बाबा आप का परिचय बतायेंगे?' 'मुझे लोग तुलसीदास कहते हैं।' 'बाबा, आप 'मानस' के सर्जक?' ''मानस' के सर्जक तो महादेव है देवी, मैं तो प्रकाशित करनेवाला हूं, प्रकाशक हूं।' माता एक दंडवत् करने आती है। गोस्वामी बोलते हैं, 'नहीं, नहीं। माता, मैं आप को प्रणाम करता हूं।' बोली, 'आप की वाणी में वैराग का बल है। ये मेरे पति की मृत्यु हुई है। सुना है, आप परम संत है। मेरे पति को वापस लौटा दो।' बुद्ध के पास भी एक गौतमी अपना बच्चा लेकर गई थी कि जीवित कर दो। और बुद्धने मुस्कुराते हुए कहा, हो जायेगा, लेकिन पहले नगर में जा और उसीके घर से थोड़ा जव लेकर आ जिसके घर में किसीकी कभी मृत्यु ना हुई हो। वो जव लेकर आ मैं उसमें मंत्र-तंत्र करके तेरे बेटे को जीवित कर दूंगा। और वो औरत जाती है। जिसके घर जाय सब के घर पीढ़ियों की पीढ़ियां मरी है। पूरे नगर में घूमी। सब जव देने को तो तैयार थे लेकिन मृत्यु तो सब के घर! लौटी; बुद्ध से कहा, आप ने तो मुझे मुश्किल में डाल दिया! बच्चे को जीवित नहीं करना था तो आप मुझे ऐसे ही बता देते! बोले, जव लायी? बोली, अब बच्चे को खड़े करने की जरूरत नहीं है, मेरे अंदर कोई खड़ा हो गया है। बुद्धपुरुषों के पास धैर्यकंथा, प्रतीक्षा करनी नितांत आवश्यक है। उसने कहा, नहीं, नहीं अब मुझे किसीको जीवित नहीं करना, बात खत्म हो गई! ऐसी कथा बुद्ध के कथानकों में आई है।

वो तो तुलसी को कहती है, मेरे पति को जीवित कर दो। तो गोस्वामीजी कहते हैं, ठीक है, तुम्हारे घर जा। और ये शब का तो अग्नि संस्कार कर दिया जाये; घटना हो जायेगी। कर दिया अग्नि संस्कार। एक संत की बोली बड़ी तसल्ली हो गई। घर गई। एक

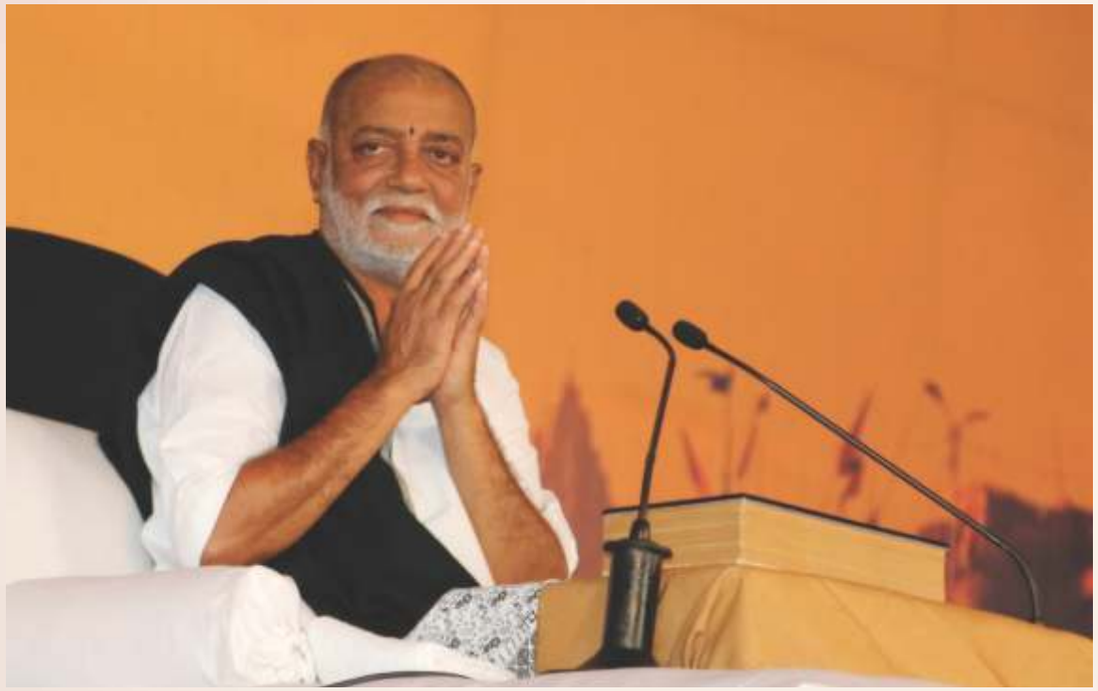

महिने के बाद तेरा पति मिलेगा, गोस्वामीजी ने कहा। साधु के वचन पर भरोसा हो गया। और मैंने कल निवेदन किया था कि जिस भरोसे के पीछे आशा हो, वो भरोसा जड़ है। तुलसीदासजी ने अपने पद में क्या कहा है-

चहो न सुमति संपत्ति सुगति
कछु रिद्धि सिद्धि बिपुल बड़ाई।

तुलसी कहते हैं, मुझे सद्‌बुद्धि भी नहीं चाहिए। हद है! लोग तो मांगते हैं! तुलसी कहते हैं, सुमति होगी तो संपत्ति मिलेगी, 'जहां सुमति तहँ संपति नाना।' मुझे संपत्ति भी नहीं चाहिए। सद्‌गति भी नहीं चाहिए। रिद्धि-सिद्ध कुछ नहीं चाहिए। तो? 'हेतु रहित अनुराग राम।' कारण बिना रघुनाथ के चरण में मेरी मोहब्बत हो। जिसके अंतरतम अवस्था में ये भाव होगा, उसके गले में भगवान राम जयमाला पहनाने के लिए तैयार होगे। तो यहां बोडी का अग्नि संस्कार हो गया और घर जाकर बैठ गई। उनतीस दिन बीत गये। तीसवें दिन वो आने की तैयारी कर रही थी तो स्वयं गोस्वामीजी उनके घर पहुंच गये।

किसीका एक प्रश्न है, 'बापू, ध्यान में अगर कोई साधु दिखाई दे तो उसका तात्पर्य क्या होता है? वो कौन है? और हमें क्या बताना चाहता है?' मेरे पास ये जवाब है कि ध्यान में यदि कोई साधु दिखाई दे तो इसका तात्पर्य ये है कि साधु का ध्यान मत करो कृपा करके। साधु तुम्हारे ध्यान में अपने आप आ जायेगा। हम करेंगे तो क्रिया का अहंकार भी आयेगा। उसको आने दो। तात्पर्य ये है कि तूंने मेरे बारे में सोचा नहीं, तो भी कोई साधु आया तो कहता है, मैं आ गया। तात्पर्य इतना कि साधु को आने दो; कोई बुद्धपुरुष को आने दो।

गुमनाम है कोई, बदनाम है कोई,
किसको खबर, कौन है क्या...

कौन है, क्या जानने की जरूरत? आ गया, आ गया! छोड़, 'भज गोविंदम्', शंकराचार्य कहते हैं।

तो तुलसी स्वयं पहुंचे उस महिला के घर। गोस्वामीजी को देखकर पैर पकड़ लिया! बोले, मैं आ गया। मैंने सोचा कि तू भूल गई होगी! तब कहती है कि मैं आनेवाली थी लेकिन ये कहने के लिए आनेवाली थी कि मुझे मेरा पति मिल गया है। बस, टागोर छोटी-सी कहानी पूरी करते हैं। अपने घर में बैठ जाओ, अपना पति मिल जाएगा।

बंदउँ रघुपति करुणानिधान।

स्थलांतर की जरूरत नहीं, कालांतर की जरूरत नहीं, देशांतर की जरूरत नहीं, भाषांतर की भी जरूरत नहीं। तो मैं आप से ये निवेदन कर रहा था मेरे भाई-बहन कि सत्य के संतान का नाम है अभय और अभय की बेटी का नाम है शांति। वैसे प्रेम के बेटे का नाम है त्याग। जहां प्रेम होगा आदमी त्याग करेगा ही करेगा। मज़बूरी है। और फिर त्याग की बेटी का नाम है शांति। 'गीता' में कहा है, त्याग से शांति प्राप्त होती है। अनंत शांति प्राप्त होती है। करुणा की बेटी है जिसका नाम है अहिंसा, और अहिंसा की फिर एक कन्या हुई जिसका नाम है शांति। ये है ॐ शांतिः शांतिः शांतिः। जो सही में सत्यनिष्ठ है वो प्रेमनिष्ठ होगा ही, होगा ही, होगा ही। सत्य वांझ नहीं होता। राम सत्य स्वरूप है, इसलिए राम प्रेममूर्ति भी है।

रामहि केवल प्रेमु पिआरा ।

सत्यनिष्ठ होना, प्रेमनिष्ठ होना। जिसमें प्रेम होगा उस आदमी में करुणा होगी ही। वो दो शब्द डांटकर बोले तो भी समझना ये करुणा की ही प्रस्तुति है। प्रेम करुणानिष्ठ बनेगा ही बनेगा। तो भगवान वेद ने 'ऋत' शब्द का प्रयोग किया है। यानी जो सत्यनिष्ठ है उसके लिए वायु हवा नहीं बहाता, मधु बहाता है।

मैं एक सूत्र सतत कहता हूं कि किसी भी इन्सान को कुबूल करो तो उनकी कमज़ोरियों के साथ कुबूल करो। हम उसको एक छबी में भगवान बना देते हैं! ख़बर नहीं क्या से क्या बना देते हैं! फिर आशाओं के कारण विश्वास की नींव कब हिल जाय और कब ये भरोसे का भवन गिर जाय, कोई ठिकाना नहीं! विनोबाजी कहते थे, मेरी बात पर भरोसा मत करना; मैं भरोसें का आदमी नहीं हूं। आज ये सत्य है, कल दूसरा सत्य मिल जायेगा तो मैं वो कहूंगा। दीक्षित दनकौरी की गज़ल है-

या तो कुबूल कर मेरी कमज़ोरियों के साथ,
या छोड़ दे मुझे मेरी तन्हाइयों के साथ।

गोस्वामीजी कहते हैं-

मो सम दीन न दीन हित तुम्ह समान रघुबीर ।
अस बिचारि रघुबंस मनि हरहु बिषम भव भीर ।।

हे हरि! या तो मेरी कमज़ोरियों के साथ मेरा स्वीकार हो, या मुझे अपने भाग्य पर छोड़ दे।

लाज़िम नहीं कि हर कोई हो कामयाब ही,
जीना भी सीख लीजिए नाकामियों के साथ।

हे युवान भाई-बहनों, कभी फेईल हो गये तो डीप्रेस मत होना। तो बाप, आदमी का स्वीकार उनकी कमज़ोरियों के साथ होना चाहिए। पूर्ण केवल, केवल, केवल परमात्मा है। आदमी अधूरा है।

विश्वामित्र दशरथ के पास राम को मांगने आये तो दशरथजी क्यों मना करते? दे देना चाहिए। कहते हैं, मैं राम आप को नहीं दूंगा। क्योंकि दशरथजी को राम अपनी संपदा लग रही है। पुत्रमोह है, सुत विषयक रति है उसकी। इसलिए उसको लगता है कि मेरा बेटा दे दूंगा तो घर राम के बिना हो जायेगा। इसलिए वशिष्ठजी बीच में खड़े हुए, दे दो। तू मानता है तेरा बेटा है? ये ब्रह्म है। पूर्ण बचता है, पूर्ण दे देने के बाद भी। दशरथ विश्वामित्र के साथ अविवेक भी करते हैं! विप्र कहते हैं! आज दशरथ मूढ़ हो गये! इसलिए वशिष्ठ कहते हैं, ये ब्रह्म है, पूर्ण है। अपनी मूढ़ता छोड़ो।

पूर्ण मदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवाणं शिष्यते।

वेदमंत्र 'रामायण' में कैसे सिद्ध होते हैं! केवल गुरुकृपा से सिद्ध हो सकते हैं। आप किसीको सत्य दो तो आप का सत्य कम नहीं होगा, आपको सत्य मिल जायेगा। आप प्रेम दो तो प्रेम मिलेगा। खलील जिब्रान ने कहा था कि प्रेम उसको कहते हैं कि प्रेमी कुछ दे नहीं, प्रेमी खुद को दे

दे। करुणा देने से करुणा कम नहीं होगी। ये मूडी ऐसी है-

दिन-दिन बढ़त सवायो,
पायोजी मैंने राम रतन धन पायो।

इसलिए जब अपना आनंद दो तब कमज़ोर मत होना। जिसस की चेतावनी है, जो देता है उसको ओर दिया जायेगा और जो नहीं देता है उसके पास जो भी है वो भी छिन लिया जाएगा। आप के पास प्रेम है, खूब बांटो। सत्यनिष्ठ होगा उसे प्रेमनिष्ठ होना ही चाहिए। गांधीजी सत्य को स्वीकार करे और किसीको प्रेम ना करे तो? यद्यपि प्रेम कभी-कभी कठोर हो सकता है। और जो प्रेमनिष्ठ है वो करुणानिष्ठ होगा ही होगा। चैतन्य महाप्रभु ने कहा था कभी कि हरि नाम के बिना विद्या विधवा है। मुझे कहने दो, करुणा के बिना प्रेम विधुर है। प्रेम की छाया करुणा होनी चाहिए। जो सत्य, प्रेम, करुणानिष्ठ होगा उसके लिए गरम हवा नहीं होगी, मधुमय हवा होगी। उसे लिए मधु ही मधु।

तो, हम वेदमंत्र की चर्चा कर रहे थे। वेद भगवान कहते हैं, सत्यनिष्ठ के लिए जो वायु बहती है वो मधुमय है, वो अमृतमय है। 'मधु क्षरन्ति सिंधवः।' सिंधवः मानी समुद्र। जो सत्यनिष्ठ है उनके लिए समंदर की जो लहरे हैं वो खारी नहीं है, मधुमय है, मधुर है। हमारे यहां सात समंदर में एक सागर मधुमय माना गया है। कोई तात्त्विक अर्थ में भी हो सकता है। जो सत्यनिष्ठ है उसके लिए कोई भी औषधि मधुमय हो जाती है। एक वैद्य कोई औषधि दे दे, आयुर्वेद में बहुधा चूर्ण आदि औषधि मधु के साथ देने का ज्यादा प्रस्ताव आता है। या फिर जल के साथ, दूध के साथ अनुपान देते हैं लेकिन मधु की चर्चा ज्यादा आती है।

मधु से एक शब्द बना है 'मधुकर' और 'मधुकर' शब्द संत का पर्याय है, ऐसा 'मानस' में लिखा है। जो विद्या संत के साथ ली जाय, जो कला संत के साथ ली जाय, जो कौशल्य संतत्व के साथ लिया जाय वो सब अहंकार से मुक्त मधुमय बन जाता है। सभी औषधियां मधुवंत बन जाती है। प्यारा शब्द है 'मधुमास।' भगवान वेद कहते हैं कि मधु जो सत्यनिष्ठ है उनके लिए दिवस और रात दोनों अमृतमय बेला हो जाती है। आठें प्रहर आनंद जिसको कहते है, सब बेलायें उसको मधुर, सगुन देनेवाली बन जाती है।

आगे कहते हैं, 'मधुमत्पार्थिवं रजः।' पार्थिव तत्त्व मानी पृथ्वीतत्त्व; उसका एक-एक रजकण उसके लिए मधुमय बन जाता है, जो सत्यनिष्ठ है।

गरल सुधा रिपु करहिं मिताई ।
गोपद सिंधु अनल सितलाई ।।

सब पलट जाता है, मधुमय हो जाता है। आकाश मधुमय बन जाता है। उसको हम पिता कहते हैं, पृथ्वी को हम माता कहते हैं। पृथ्वी रूपी माता हमारे लिए मधुमय बन जाती है। और आगे भगवान वेद कहे, जो सत्यनिष्ठ है उनके लिए प्रत्येक वनस्पति मधुमय बन जाती है। वायु मधुमय और अब तुलसी ने जो पंक्तियां रामजन्म के लिए लिखी है, वो वेद की बातें उनमें समाहित है। इसलिए मैंने कहा कि गंगा बहती है वो वेद बहता है लेकिन तरंगें चौपाईयां है। ज्यादा सूत्र वेद के मुताबिक तुलसी ने चौपाईओं में उतारा है। मधुमास जब हुआ तब नौमी जब हुई तब-

नौमी तिथि मधु मास पुनिता ।
सकल पच्छ अभिजित हरिप्रीता ।।
मध्यदिवस अति सीत न धामा ।
पावन काल लोक बिश्रामा ।।
सीतल मंद सुरभि बह बाऊ ।
हरषित सुर संतन मन चाऊ ।।

मंद, सुगंधी, शीतल तीनों प्रकार की हवा राम जनम के इस मधुमास में बह रही थी मानी वायु मधुमय बन गया था।

बन कुसुमित गिरिगन मनिआरा ।

वनस्पति मधुमय, रज-रज मधुमय, सरितायें मधु बहा रही थी।

स्रवहि सकल सरिताऽमृतधारा ।।

आकाश मधुमय बना था।

गगन बिमल संकुल सुर जूथा ।
गावहि गुन गंधर्ब बरूथा ।।
चले सकल सुर साजि बिमाना ।

आकाश मधुमय। स्तुतियां हो रही है। गर्भस्तुति का निनाद हो रहा है। पृथ्वी गद्‌गद् हो गई थी।

अस्तुति करहिं नाग मुनि देवा ।
बहुबिध लावहिं निज निज सेवा ।।

प्रकट-अप्रकट सब मधुमय है। मेरी छोटी बुद्धि गुरुकृपा से जितना समझ पाई इतने में ऋग्वेद के कुछ सूत्र तुलसी की चौपाई में सार रूप में निहित है; उसको कहते हैं मधुमास। सब मधुमय बन जाता है। शर्त इतनी है, आदमी सत्यनिष्ठ हो। जो पल हो मधुमास बन जाती है।

भगवान राम तेरह साल चित्रकूट में रहे वहां जो वन है उसको हम कामदवन कहते हैं। चित्रकूट में कामद वन है। वहीं से प्रभु की यात्रा चौदहवीं साल में जब आगे बढ़ती है, तो आप जानते हैं कि एक दूसरे वन में प्रवेश करती है रामयात्रा, जिस वन का नाम है दंडकवन। फिर पंचवटी में दंडकवन में जानकी का अपहरण हुआ और रावण उसका अपहरण करके लंका ले गया। और लंका जिस वाटिका में जानकीजी को जतन करके रावण ने रखा है उस वन का नाम है अशोकवन। कामदवन, दंडकवन फिर अशोकवन। फिर रावण आदि का निर्वाण हो गया। विभीषण को राज ये सब लीला। और बीच में एक बदरीवन की कथा बहुत संक्षेप में आती है।

> आप किसीको सत्य दो तो आप का सत्य कम नहीं होगा, आपको सत्य मिल जायेगा। आप प्रेम दो तो प्रेम मिलेगा। करुणा देने से करुणा कम नहीं होगी। जिसस की चेतावनी है, जो देता है उसको ओर दिया जायेगा और जो नहीं देता है उसके पास जो भी है वो भी छिन लिया जाएगा। आप के पास प्रेम है, खूब बांटो। सत्यनिष्ठ होगा उसे प्रेमनिष्ठ होना ही चाहिए। और जो प्रेमनिष्ठ है वो करुणानिष्ठ होगा ही होगा। चैतन्य महाप्रभु ने कहा था कभी कि हरि नाम के बिना विद्या विधवा है। मुझे कहने दो, करुणा के बिना प्रेम विधुर है। प्रेम की छाया करुणा होनी चाहिए।

मुझे 'मधु' शब्द से ज्यादा नाता है इसलिए जानकी की खोज करके अंगद जिस टुकडी का नायक रहा वो जामवंत और हनुमानजीवाली टुकडी, माँ जानकी का पता लगाकर लौटती है तब एक वन में प्रवेश करती है उसका नाम है मधुवन। ये मधुवन 'मधु' शब्द से जुड़ा है। मैं आप से ये पूछना चाहता हूं कि अशोकवन किसने उजाड़ा? अशोकवन हनुमानजी ने उजाड़ा, ठीक है? मधुवन किसने उजाड़ा? अंगद ने, युवराज ने मधुवन उजाड़ा। हनुमानजी मधुप्रेमी है, हनुमानजी निष्काम है। निष्काम के सामने मधु सुरक्षित रहता है। भोगी मधुवन को मसल देता है। अंगद निष्काम नहीं है। जिसमें कामना शेष है वो आदमी मधुवन को बिगाड देता है लेकिन जो सही में निष्काम है वो मधुवन को आदर देगा। अंगद का एक अर्थ होता है अंगवादी, देहवादी। संसार में भी कई लोग जो देहवादी होते हैं हम जैसे। हम को लगता है, ये भोग सब मिट जाय, अल्लाह करे सब खत्म हो जाय। लेकिन जिसने सत्य को जान लिया, जिसने प्रेम को जान लिया, जिसने करुणा को जान लिया, उसको पूरी सृष्टि मधुमय दिखती है। वो उजाड़ेगा नहीं, शोषण नहीं करेगा, पोषण भी नहीं करेगा। एक उदासीनता से उसको देखेगा।

मैंने कभी कहा है कि हनुमान भी गोपी है। हनुमान मिश्रा भक्ति के आचार्य है। मिश्रा भक्ति वो है कि जिसमें प्रेम भी हो, ज्ञान भी हो और वैराग्य भी हो; वो

मिश्रा भक्ति। प्रेम होते वो विचार को छोड़ता नहीं, विवेक को छोड़ता नहीं, वो वैराग को अनदेखा नहीं करता। एक दूसरा पार्ट भक्ति का है उसको कहते हैं शुद्धा भक्ति जिसमें प्रेम ही है, विवेक-वैराग की ऐसी-तैसी! उसमें व्रजांगना आती है। शुद्धा प्रेम में गोपांगना आती है। श्री हनुमानजी महाराज मिश्रा भक्ति है। 'ज्ञानीनां अग्रगण्यं।' 'कपिमन किन्ह बिचार।' ये विचारक है। वैराग्य का तो घनीभूत रूप है हनुमानजी। हम 'ज्ञान गुन सागर' कहते हैं। तो जिसमें भक्ति भी होगी, विवेक भी होगा, वैराग भी होगा वो आदमी एक प्रकार की गोपी है। श्री हनुमानजी मिश्रा भक्तिवाली गोपी है। और गोपी हुए बिना पूर्ण प्रेम में, पूर्ण रास में प्रवेश नहीं मिलता, ये भी इतना सत्य है।

किसीने पूछा है, 'भक्ति की उच्चतम अवस्था क्या है?' परमप्रेम भक्ति की उच्चतम अवस्था है। उसमें पूरा चतुष्टय का लय हो जाता है। मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार का लय हो जाता है। हमारी ऋषि परंपरा में बहुत प्यारा शब्द आया है साक्षीभाव, दृष्टाभाव। पूछा है, 'कहा जाता है सत्य परेशान होता है, पराजित नहीं।' मैं इससे सहमत नहीं हूं। सत्य परेशान कभी नहीं हो सकता। दूसरे लोगों को लगता है कि बेचारा सत्यवादी परेशान है! ये दूसरों का आरोप है जिसने सत्यनिष्ठा सेई है उसको परेशानी होती ही नहीं। और सत्य सदैव पराजित होता है। सत्य को पराजित होना ही चाहिए क्योंकि सत्य है। जय और पराजय का द्वन्द्व सत्य को लागू नहीं होता। जय छोटी बात है। 'महाभारत' के युद्ध में जय तो पांडवो की हुई। आप कहेंगे वहां सत्य की जय हुई। 'महाभारत'में छल और कपट में दोनों पक्ष बराबर थे। दोनों में छल हुआ था। प्लस पोइन्ट एक ही था पांडव का वहां योगेश्वर कृष्ण था। मात्रा में 'रामायण' के युद्ध में इतना छल नहीं। हां अपने-अपने युद्ध कौशल्य का उपयोग किया। वायु का बाण, अग्निबाण, ये शस्त्रविद्या की प्रस्तुति थी। 'रामायण' मूल्यांकन करती है। कृष्ण को खबर है कर्ण के कुंडल है। उसका कुंडल ले लो; ये श्रवण विद्या है। कर्ण के पास ये श्रवण विज्ञान रहा और मैं 'भगवद् गीता' अर्जुन को सुनाउंगा तो पहले कर्ण सुन लेगा और 'गीता' उसको पच जायेगी तो मेरा पूरा अभियान असफल हो जायेगा इसलिए श्रवण विद्या छीन ली जाय। कवच उतारना संवेदना मिटा दो। चर्मेन्द्रिय स्पर्शेन्द्रिय है। 'महाभारत' में पांच 'क' है। कर्ण, कृष्ण, कुंती, कृष्णद्वैपायन और याज्ञसेनी कृष्णा-द्रौपदी पांच 'क' का अमृत है 'महाभारत'। 'महाभारत' में जो नहीं वो अन्यत्र कहीं नहीं। जहां भी कुछ है वो 'महाभारत'में है, है, है।

राम और भरत जब गेंद से खेलते थे तब राम तो सदैव जीत में होते थे लेकिन खुद हार जाते, राम भरत को जीता देते थे। श्रेष्ठ को पराजित होना उसकी शोभा है। तो सत्य को हारना चाहिए और हारे को हरिनाम। पुत्र से पिता पराजित हो ये देश की पावन परंपरा है और शिष्य से गुरु पराजित हो ये हमारी धरोहर है। मेरा कोई शिष्य नहीं है, चेला नहीं है। मैं किसी का गुरु नहीं, मेरे हजारो श्रोता है। व्यासपीठ के अनगनित चाहक है।

'क्या प्रधानमंत्री मोदीजी अपना टेन्शन दूर करने के लिए आप से सलाह लेते हैं?' अरे यार, बड़ी दूर नगरी! दूर नगरी, बड़ी दूर नगरी! वो टेन्शन में है कि नहीं मुझे ख़बर नहीं, लेकिन मेरे साथ जब फोन पर बात हुई है, वो ही टोन में आदमी बात करता है बापू, लहेर ही लहेर है!

पूछा है, 'आपने जीवन में कभी सुट पहना है?' हां, जब मैं प्रायमरी स्कूल में नौकरी करता था तब मैंने टाई नहीं परंतु पेन्ट-कोट बनवाया था, और पहना था। 'सास-बहु का झगड़ा हो तो किसका पक्ष लेना चाहिए?' सत्य और प्रेम का। मेरे भाई-बहन, आज की कथा के समापन में दो-तीन मिनट हरिनाम। क्योंकि आख़िर में बोलना तो बोलते हैं, आनंद कर लेते हैं; बाकी सार तो केवल हरिनाम है।

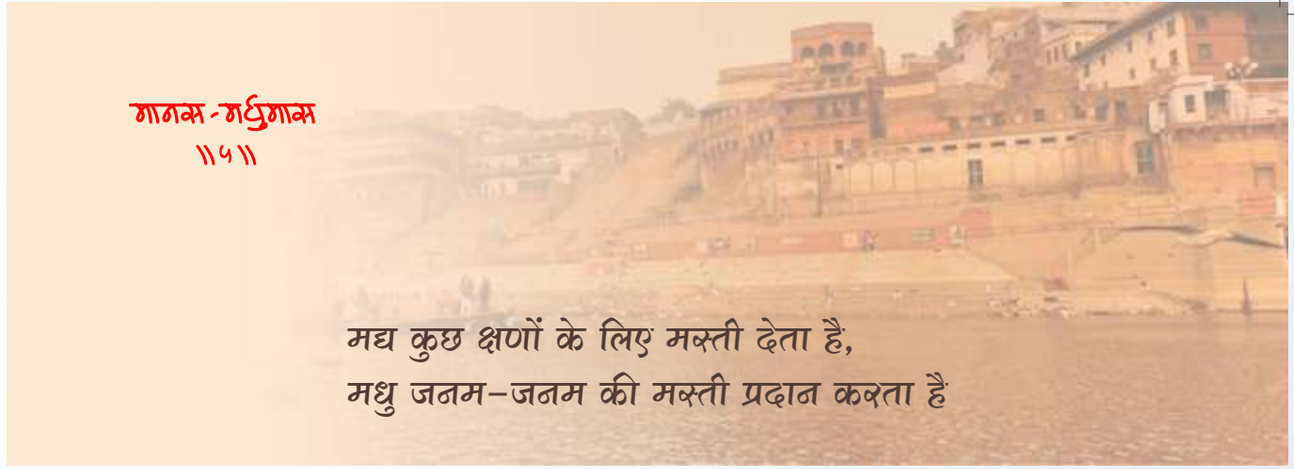

मद्य कुछ क्षणों के लिए मस्ती देता है,
मधु जनम-जनम की मस्ती प्रदान करता है

'रामचरित मानस' में एक गिनती के अनुसार सोलह बार 'मधु' शब्द का प्रयोग हुआ है। करीब-करीब तेरह बार केवल 'मधु' शब्द का प्रयोग है। दो बार 'मधुवन' का प्रयोग है। एक बार 'मधुपर्क' का प्रयोग है। मधु की महिमा बहुत है। आज एक ऋग्वेद के मंत्र का पठन करना चाहता हूं। मैं ले आया हूं, माँ गंगा के तट पर आईये, वेद का उच्चारण करें। मैंने कल कहा था, वेद क्लिष्ट है लेकिन वेद समझ में आ जाय गुरुकृपा से तो सरल तो नहीं कहूं लेकिन वेद सहज बहुत है, स्वाभाविक है। इसके पीछे कोई चतुराई नहीं है। एक लबालब अनुभूति-मेहसूसी का साम्राज्य है। सहज चलता है।

टागोर ने कभी कहा था कि तेरी वाणी बहुत सहज है; लेकिन उसकी व्याख्या करनेवाले बहुत महेंगे साबित हो रहे हैं! शास्त्र कभी बाप-बेटे की वाणी में बोलता है। शास्त्र कभी पति-पत्नी के संवाद के रूप में बोलता है। शास्त्र कभी दो मित्रों के बीच जैसे बातचीत होती वैसे बोलता है। वेद बोलेगा तो आदेशात्मक बोलेगा। अधिकार भी है उसको। सहजता को ये अधिकार है। आक्रमक आदमी लाख चिल्लाकर आदेश दे तो भी कोई मज़बूरी से कुबूल करेगा, लेकिन सहज आदमी का सहज निकला आदेशात्मक सूत्र समझने में, निभाने में आदमी उत्साहित होता है।

किसीने पूछा है, 'आप बीच-बीच में 'बाप' बोलते हो उसका मतलब क्या है?' तो, 'बाप' एक मेरा संबोधन है आप के लिए, जैसे 'मानस' में आप को संबोधन मिलेगा 'तात'; तात मानी बाप। हम बेटे को भी बाप कहते हैं, 'बाप, तू कब आया, हे बेटा?' और बाप को भी बाप कहते हैं। मैं बीच-बीच में 'यार' भी कहता हूं। मुझे कई लोग कहते हैं कि धर्ममंच पर से कोई किसी को 'यार' कहकर बुलाये! मैं मेरे श्रोताओं को मेरी व्यासपीठ से दूर होने नहीं देना चाहता क्योंकि धर्म कुछ फांसला करना चाहता है, तथाकथित धर्म! मेरा 'यार' शब्द है, हम और आप निकट रहे। लिप्त न हो लेकिन सिक्त जरूर हो। मैं आप से निवेदन करूं, लिप्त मत होना, लेकिन मधुसिक्त जरूर होना। लिप्तता आसक्ति है। सिक्तता 'रसो वै सः' है। तो बाप, व्याख्या कोई भी सूत्र को जटिल कर देती है। तो, वेद का मंत्र है तो बड़ा अद्‌भुत और मुझे उसका सार सहज कहना है, सीधा-सादा सार।

तीव्रो वो मधुमाँ अयं शुनहोत्रेषु मत्सरः।
एतं पिबत काम्यम्॥

आप फरमाते हैं कि मधु का पान तीव्र गति से करो, जल्दी करो। एक बात मेरी ओर से जोडूं तो मद्यपान धीरे-धीरे करो। हरेक गंगाघाट पवित्र घटनाओं की माला है। लेकिन आदरणीय गोविंदाचार्यजी ने कल बताया कि गंगा के घाट पर गौकथा चल रही है। एक मुस्लिम युवान गायों की कथा कर रहा है। मैं आदर करता हूं। सलाम युवान प्रवक्ता को जो गौमाता के लिए कथा गा रहा है। देश में कई प्रकार की कथा होनी चाहिए लेकिन नीव रामकथा। रामकथा मीन्स

परम कथा। परम सत्य, प्रेम, करुणा की कथा। गुजरात में गांधीकथा चली। देश-विदेश में चली। सरदार पटेल पर कथा हो रही है। मैं सब का स्वागत करता हूं। कोई बहन नारीकथा, नारीशक्ति की कथा गा रही है। होना चाहिए। गौकथायें विपुल मात्रा में देश में हो रही है। और ये जो दूसरी पद्धति से परम को पाने की इबादतीय पद्धति है। उस नौजवान गौकथा कह रहा है। मेरी व्यासपीठ उसको सलाम करती है।

दूसरी घटना कह रहा था कि बापू, गंगा के घाट पर 'सुबह-ए बनारस' चल रहा है। रोज शास्त्रीय संगीत साड़े पांच या पांच चालीस से शुरू होता है वाद्य, गायन। माँ गंगा के तट पर ये होना सगुन है। मैं आदर करता हूं। पंडित किशन महाराज जब भी बुलाये तलगाजरडा सहज चले आये। अपना स्थान था। उसके स्मरण में एक ताल बजा दे। मेरी भी गंगा है। ये ('रामायण') भी तो गंगा है। मैं पचपन साल से आंतरिक स्वच्छता का अभियान इस गंगा के द्वारा कर रहा हूं। ये भी तो एक अभियान है। मेरे और आप के आंतरिक कचरे को साफ किया जाय। ये भी तो एक गंगा है। क्या कहा तुलसी ने?

पूछेहु रघुपति कथा प्रसंगा।
सकल लोक जग पावनि गंगा।।

सकल लोक को पवित्र करनेवाली ये गंगा है भगवत् कथा। कथा हमें आंतर् शुद्धि का वरदान देती है। तो यहां वेद मंत्र कहता है, 'तीव्रः'; तू मधुपान तीव्रता से कर। मद्यपान धीरे-धीरे कर। और भेद समझना, मधु मद्य नहीं है। मद्य मधु नहीं है। मधु का एक अर्थ करीब-करीब लगाना चाहे तो मधुरस का एक अर्थ होता है सोमरस, जो वाह-वाह में नहीं पी जाती थी। जो वाह-वाह में पी जाय वो मद्य और स्वाहा में पी जाय वो मधु; इतना फ़र्क है। एक ही जाम ने दोनों का भ्रम तोड़ दिया।

जो रिन्द था वो मस्जिद में गया।
मौला था वो मयखाने में चला गया।

एक मद्य का प्याला ये कर सकता है तो मधुप्याला कहां ले जाएगा? 'यद् गत्वा न निवर्तन्ते।' उसी भूमिका पर पहुंचा देता है कि जहां से आदमी को फिर कभी लौटना न पड़े। 'पायो परम विश्राम।' कि एक डकार आ जाय। कबीर कहे, 'मैं पूरा पाया।' भगवत्कथा का पान जितना हो जल्दी करो। मरीज़ भी कहता है-

जिंदगीना रसने पीवामां करो जल्दी मरीज़,
एक तो ओछी मदिरा छे ने गळतुं जाम छे!

कल करेंगे, कल सुनेंगे, कल हरिनाम लेंगे, ये मदिरा नहीं है, ये मधु है। भेद समझें। मद्य कुछ क्षणों के लिए मस्ती देता है, मधु जनम-जनम की मस्ती प्रदान करता है।

नाम खुमारी नानका चढ़ी रहे दिन रैन।

जिंदगी छोटी है, हमारी छोटी-सी आयु ये जल है और तन अंजलि है। लाख अंजलि में जल लो संभालने की कोशिश करो तो भी ये तिराड़ों की गेप से पानी टपकता जा रहा है वैसे शरीररूपी अंजली से आयुष्य रोज-रोज टपक रही है। मधु मानी रामरस, मधु मानी परम तत्त्व का रस। मधु का सीधा-सा अर्थ संस्कृत में मधुर ही होता है। मधुर कर दो, इसमें 'र'कार, 'म'कार दोनों आ जाता है। केवल 'मधुर-मधुर' बोलो तो रामनाम का जप आ जायेगा।

आखर मधुर मनोहर दोउ।

ये दो अक्षर 'र'कार और 'म'कार वो मधुर में समाविष्ट है। मिथिलावाले गाते हैं-

मधुर मधुर नाम सीताराम सीताराम।
मधुर मधुर नाम सीताराम सीताराम।

रामनाम मधुर है, रामकथा भी मधुर है। जिसका हरिहर के पद में प्रेम है और जिसकी मति कुतर्की नहीं है उसके लिए रामकथा मधुर कथा है। राम की लीला मधुर है। और उसका धाम चाहे काशी हो, चाहे अवध हो, चाहे मिथिला हो, चाहे वृंदावन हो, मधुर है। तो-

आखर मधुर मनोहर दोउ।

दो अक्षर का बड़ा प्यारा शब्द है। लेकिन आसमां को समाया है। तुलसी ने 'मानस' में 'मधु' का सोलह बार

प्रयोग करके मानो सोलह कला के चंद्रमाँ को उदित किया है। वो चंद्रमाँ में तो दाग है यस, और शुकल पक्ष और कृष्ण पक्ष का वृद्धि-क्षय उसको खा जाता है लेकिन 'मानस' का जो मधु चंद्र है उसको न शुकल पक्ष न कृष्ण पक्ष का द्वैत छू सकता है और न कोई राहु उसको निगल सकता है। ये मधु पूर्ण मधु चंद्र है।

युवानी में क्या कथा सुनना? ऐसा आप को तर्क दिया जाता है! कब सुनोगे? बूढ़े होने के बाद तो सोओगे! और सुनोगे तो भी समझोगे कहां? क्योंकि तुमने पिटीपिटाई ग्रंथियां बांध रखी है! गंगासती का एक पद है-

वीजळीने चमकारे मोती परोववुं पानबाई!

उपनिषद कहता है, 'युवा स्यात् साधु युवा अध्यापक।' साधु सदैव युवान होना चाहिए। साधु को बूढ़ा होने का अधिकार नहीं। सर्जक को भी बूढ़ा होने का अधिकार नहीं। सर्जक बूढ़ा हो जाय ये अस्तित्व का अपराध है। कविता कायम नौयौवना की भांति नूपुर बांधी आती है मीरां की तरह। मेरी व्यासपीठ कहती है, सागर की कविता का नाम लक्ष्मी है। अग्नि की कविता का नाम द्रौपदी है और आकाश की कविता का नाम सरस्वती है। ये सब जीवंत नूपुर-कंकन पहनी कवितायें है। ये मधुमास चल रहा है; वसंत है। अयोध्या में तो एक मास रामनवमी का मधुमास लेकिन जनकपुर जाईये, मास बदलते रहते हैं लेकिन मिथिला के बाग में केवल-केवल ऋतुराज वसंत ही रहता है। ओर महिने को आने की इज़ाज़त नहीं।

जहँ बसंत रितु रही लोभाई।

रामचंद्र पुष्पवाटिका में जनकपुर में गये तब तो करीब-करीब शरद ऋतु होनी चाहिए। कार्तिक लग्न का अंदाजा है। मार्गशीर्ष में तो शादी होती है। तो कहते हैं, एक बार बसंत ऋतु आई मिथिला में फिर उसने सोचा, दुनिया में बारी-बारी जाउंगी लेकिन मिथिला में तो नित्य निवास करूंगी। घराना मिथिला है।

कंकन किंकिनि नूपुर धुनि सुनि।
कहत लखन सन रामु हृदयँ गुनि।।

ख़बर नहीं, काशी में आनंद आ रहा है! ये आनंद कानन है। एक शे'र सुनिये-

ये जरूरी नहीं कि तुम मेरी निगाह में रहो।
जहां भी रहो खुदा की पनाह में रहो।

प्रेम वोच नहीं रखता कि कौन कहां जाता है? कौन किससे बात करता है? और ध्यान रखना, ये 'मधु' शब्द चल रहा है तो भक्ति भी मधुरा है। भक्ति मधुरस है। जहां भी रहो, अल्लाह की पनाह में रहो। खुश रहो। ऐसे स्थान में रहो और वहां यही मिल जाय तो जल्दी पीओ।

वृंदावन में एक मधु नामक व्यक्ति है, जिसका नाम है मधुमंगल; कृष्ण सखा। हमारा नरसिंह मेहता कहता है-

जागने जादवा कृष्ण गोवाळिया,
तुज विना धेनुमां कोण जाशे?
त्रणसो ने सांठ गोवाळ टोळे वळ्या,
वडो रे गोवाळियो कोण थाशे?

मतलब तीन सौ साठ दिन की साल होती है। इनमें से बड़ा दिवस कौन? जिस दिन मधुपान किया, भक्तिरस का पान किया, हरिरस में डूबे ये दिन बड़ा। ये श्रेष्ठ दिन। उठ, तारा वगर भूमिनो भार कौन उपाडशे! तुज विना धेनुमां कोण जाशे? धेनु मानी गाय। गाय मानी इन्द्रिय। हमारी इन्द्रियों को ठीक से कौन चरायेगा? हमारी इन्द्रियां काम, क्रोध, लोभ, मोह के क्षेत्र में चली जायेगी तो दंड मांगेगी। हमारी इन्द्रियों का नियमन हे गोपाल, तेरे बिना कौन कर सकता है? नरसिंह मेहता के कालीय दमन की एक पंक्ति मुझे बहुत अच्छी लगती है। कृष्ण ने कालिनाग का मद मर्दन किया उनकी फना पर गोविंद ने नृत्य किया उसके बाद नागनियां आती है।

नागण सौ विलाप करे छे, मेलो अमारा कंथने।
अमे अपराधी कांई ना समज्या, न ओळख्या भगवंतने।

हमारे पति को छोड़ दो। कृष्ण ने अपनी गोप मंडली को कहा कि मेरी माँ से दहीं, ढ़ेबरा, कढीयेल दूध लाता हूं। मैं अकेला नहीं खाता हूं, सब को बांटता हूं। तो कभी ऐसा नहीं लगता कि आप मेरे लिए कुछ ले आओ? तुम्हारा बल हो, तेज हो, सामर्थ्य हो, प्रति पल तुम्हारी स्फूर्ति हो, तुम्हारी लिए कोई भी क्रिया हो, योगवशिष्ठ कहता है, उसके मूल में ब्रह्म विचार ही काम करता है। तो कृष्ण ने गोप सखाओं को कहा कि मैं तुम्हारे लिए हररोज कुछ न कुछ लाता हूं। कल मेरे लिए तुम भी ले आना। मैं अपने घर से कुछ नहीं लाउंगा। गोप सखाओं को खुशी हुई, चलो गोपाल कल हमारी रोटी खायेगा। तो सब अपने घर गये और दूसरे दिन किसीने ये बनवाया, किसीने ये बनवाया! अकबर ईलाहाबादी कहते हैं-

किस किस अदा से तूने जलवा दिखाके मारा।
आज़ाद हो चुके थे तूने बंदा बनाके मारा।
आंखों में तेरे जालिम छुरियां छुपी हुई है।
देखा जिधर तो तूने पलके उठा के मारा।

सब खुश थे कि गोविंद हमारे घर का खाना खायेगा। उसमें एक मधुमंगल नाम का ब्राह्मण था। बड़ा गरीब था; अकिंचन ब्राह्मण था। और हमारी कथा में हंमेशा पहले ब्राह्मण गरीब होता है! तो मधुमंगल कहता है, 'माँ, गोविंद ने हम सब से कुछ मांगा है। हमारे घर में कुछ नहीं है तो मैं क्या ले जाउं?' माँ रातभर न सो पाई!

भूखे बच्चों की तसल्ली के लिए,
माँ ने फिर पानी पकाया रातभर।

सुबह हुई। मधुमंगल जल्दी तैयार हुआ। माँ ने कहा, 'बेटा, एक कुल्हड में खट्टी छाछ है, तूं ले जा। बेटा, याद रखना कि कृष्ण को लगना चाहिए कि तू भी मेरे लिए कुछ लाया। ये खट्टी छाछ गोविंद को पिलाना मत। कहीं पीने से उसको कुछ हो जाय तो हम यशोदा को क्या मुंह दिखायेंगे?' आदमी जिससे प्रेम करता है, उसका ध्यान बहुत रखता है।

मधुमंगल कुल्हड में खट्टी छाछ लेकर उपर कपड़ा बांधकर निकलता है। सब गोवृंद ईक्ठे हुए। दोपहर हुई तो कृष्ण ने कहा, चलो, मेरे लिए क्या लाये हो? सब अपना-अपना डबरा खोलकर लाता है। कोई ढ़ेबरा, कोई कुछ, कोई कुछ। मधुमंगल अपने कुल्हड को बचाये हुए है। और कृष्ण का स्वभाव है, जो छिपाये उसको पहले पकड़ना! गोविंद बोले, मधु, तू क्या छिपा रहा है? कृष्ण ने झपटने के लिए जल्दी में दौड़ा, मैं इसे ले लूं। इतने में माँ के शब्द मधुमंगल को याद आये और खट्टी छाछ मधुमंगल अकेला ही जल्दी पीने लगा कि मैं पी जाउं! और जैसे पीने लगा कि इतनी तीव्र गति से पीने लगा तो अपने होठों के किनारों से खट्टी छाछ मधुमंगल के मुख से नीचे गिरने लगी तब कृष्ण दौड़कर नीचे घुंटने टेककर मुंह उपर रखकर बैठ गया और मधुमंगल से मुख से गिरी छाछ का कृष्ण पान करने लगा! जल्दी-जल्दी कृष्ण पीने लगा। 'तीव्रः', शास्त्रकार भगवान वेद कहते है कि मधु का पान तीव्र गति से करो। ये मधु कौन-सा है? वाह- वाहवाला मधु नहीं है। कौन-सा है? जो हमें और आप को बेहोश बना दे वो नहीं। हवन आदि प्रक्रिया के समय सोमवली से बना ये मधु है। ये स्वाहा के द्वारा निर्मित हो। मद्यपान ये वाह-वाह का रस है, मधुपान ये स्वाहा-स्वाहा का रस है। ये मेरे लिए नहीं तेरे लिए है। फिर मरीज़ याद आता है-

बस एटली समज मने परवरदिगार दे।
सुख ज्यारे ज्यां मळे त्यां बधाना विचार दे।

गुजराती गज़ल है। अर्थ है, हे परवरदिगार! हे परमात्मा! मुझे तू इतनी समझ दे। टागोर कहते हैं, हे परमात्मा, मुझे प्रार्थना करने का अधिकार दे। तो परमात्मा ने रवीन्द्रनाथ टागोर को कहा कि किस प्रकार की प्रार्थना करना आप चाहते हो? तो बोले, बस कि मेरे मारग में संकट आये तो मैं उससे बच जाउं, ऐसी प्रार्थना का मुझे अधिकार मत देना। लेकिन मेरे जीवन में संकट बाधायें

जो आये उनके सामने तेरी कृपा से मैं लड़ सकूं, ऐसी प्रार्थना करने का मुझे अधिकार दे। मैं किसी भी कार्य में सफल हो जाउं ऐसी प्रार्थना मेरे होठों पर मेरे मालिक, कभी आने मत देना। लेकिन मैं सफल हो जाउं तो तेरा स्मरण कभी न चुकूं ऐसी प्रार्थना करने का मुझे हक्क दे। मेरा सब लूंट जाय तो भी मेरे चेहरे पे कभी शिकायत ना आये, लेकिन मेरा सब कुछ लूंट जाय, छूट जाय तब मुझे इतनी प्रार्थना का अधिकार दे कि मेरे हाथ से तेरा हाथ छूट न पाये। हे बुद्धपुरुष, हे मेरे आका, हे मेरे सद्गुरु, मैं मुसीबतों से बच जाउं ऐसी मांग नहीं।

एक वस्तु याद रखना मेरे श्रावक भाई-बहन, सच्चा बुद्धपुरुष आप को आंतरिक संपदा भी देता है और बहिर् संपदा भी देता है। क्यों? इसलिए ताकि दो संपदा में शाश्वत संपदा कौन है उसका तुम निर्णय कर सको। बुद्धपुरुष जानता है कि बहिर् संपदा नाशवंत है, भीतर की संपदा शाश्वत है; फिर भी दोनों देकर साधक पर छोड़ देता है कि तुम तुलना करो। एक ओर धन की संपदा दी ओर दूसरी और भीतर ध्यान की संपदा दी। अब तुम उसका मूल्यांकन करो। सही में जिसने बुद्धपुरुष का आश्रय किया उसको दोनों संपदा मिली। हे मेरे मालिक, मुझे इतनी समझ दे, मैं सफलता नहीं मांगता, तेरा हाथ ना छूटे।

बनके पत्थर हम पड़े थे...

कोई बुद्धपुरुष मिले तभी अहल्या जागी। हम तो संसार के मारग पर भटक चुके थे!

बनके पत्थर हम पड़े थे सुनी-सुनी राह में,
जी उठे हम जब से तेरी बांह आई बांह में;
छिनकर नैनों का काजल ना जा रे ना जा,
रोको कोई, ओ बसंती...

हर पंक्ति लिफ्ट करती है। किसने कहा था प्रेम श्रेष्ठ है? नारद ने कहा, शंकराचार्य ने कहा, शांडिल्य ने कहा।

हम जो हारे दिल की बाजी ये तेरी भी हार है। हम हारे तो तू भी हारा। प्रेम में या तो दोनों जीतते या तो दोनों हारते। ड्रो होता ही नहीं!

सुन ले क्या कहती है पायल, ना जा रे ना जा...

क्या संगीतज्ञों ने सम्यक् संगीत दिया था! क्या बिलकुल शालीनतापूर्वक अभिनय हुआ था!

मधुमंगल के मुख से होठों के किनारों से जल्दी पी रहा था मधुमंगल। छाछ गिर रही है। कृष्ण मधुमंगल की छाछ पी रहा है। कृष्ण इतनी स्पीड से पी रहा है, उनको मधुमंगल की चिंता है कि ये घूंट ये न पी जाय! कहीं बेचारा बीमार ना हो जाय! 'पिबत काम्यम्', उसका अर्थ ये है, तुम्हारी जो इच्छा थी कि मैं मधु पीउं और ऐसी मधु तुमको मिल रही है तो तीव्रः; जल्दी करो। तुम्हारी इच्छा थी, रामकथा सुनूं। हमारी इच्छा थी कि रामकथा गाउं तो देर मत करना। फिर तीव्रता से उसको सुनो। 'मधु' शब्द की महिमा अपरंपार है।

बाप! साहित्य में मधु के बारे में चार शब्द है। एक है कल वेद के मंत्र में भी आया था 'मधुवात।' सत्यनिष्ठ व्यक्ति के लिए वायु मधु बन जाती है। 'मधुपात।' पात मानी गिरना। कई लोगों के जीवन में मधुपात होता है, मानी मधु बरसता है। तंत्र में शक्तिपात है। प्रेममारग मे मधुपात। किसीका करुणा से भरा हाथ हमारे सिर पर आ जाय और अनुग्रह बरसने लगे उसको साहित्य जगत में कहते हैं मधुपात। तीसरा शब्द है 'मधुगात।' गात यानी शरीर। कई बुद्धपुरुष के कृपापात्र अथवा स्वयं बुद्धपुरुष ये होते हैं जिसके गात्रों से मधु झरता है। दूर जाने की जरूरत नहीं है प्रमाण के लिए। मैंने भी जिसके दर्शन किये हैं, श्री श्री माँ आनंदमयी माँ। हमारे महुवा के लकडी के व्यापारी उनके परिवार से दो बेटियां माँ की बहुत निकटतम शिष्या रही। और जब मैं पहली बार आनंदमयी माँ के दर्शन के लिए गया हरिद्वार और माँ के पहली बार मैंने दर्शन किये। मुझे तो केवल दर्शन करना था। माँ तो बहुत राजी हुई। उसके बाद वो बहनों ने मुझे बताया था कि बापू, हम तो सदा साथ रहते हैं। माँ मौज आये तब स्नान करती थी। एक अवधूती दशा थी लेकिन जब माँ स्नान कर ले हम उसका बाल जो वो करे तो आनंदमयी माँ के बालों में कंगी लगाते थे तो कंगी में मध आता था! ऐसा बहनजी लोग मुझे बताते थे। और माँ के कई साधकों के ये अनुभव है। तो फिर बल मिल जाता है सूत्र को कि कई लोग मधुगात होते हैं। जिसके निकट बैठने से न चाह हुए भी मधुर आवाज़ सुनाई देने लगे तो समझना ये बुद्धपुरुष मधुगात है। बुद्धपुरुषों के पास वाचिक जप नहीं होते। वाचिक जप का अर्थ है कि होठ हिले, जीभ बोले और साधक के कान सुने भी उसको वाचिक जप कहते हैं। एक उपांसु जप है जिसमें होठ ना हिले, जीभ ना हिले, कोई आवाज़ ना आये लेकिन जप चालु हो उसको उपांसु अथवा अजपाजप भी कहते हैं। जिसके पास बैठने से अजब-सी खुश्बू आये जो कोई परफ्यूम की नहीं है, जो ईत्र आदि ठाकोरजी की सेवा में उपयोग करो वो तो ठीक लेकिन वो नहीं है। ये तो बाह्य खुश्बू है। मधुगात के बारे में ये बात है कि एक विशिष्ट गंध आने लगती है। ऐसा भी है कि मधुगात होते हैं उसके चमडी के रंग भी बदल जाते हैं। आप सात्त्विक साधक को देखिये तो पता लग जायेगा, विनम्रता का मानो ढ़ेर है। सात्त्विक साधक मनस्वी नहीं होता और यशस्वी होने की उसको कामना नहीं।

लोकनायक, राजा तीन प्रकार के होते हैं। धर्मगुरु भी तीन प्रकार के मिलते हैं। कुछ मनस्वी होते हैं, मनस्वी राजा। 'रामचरित मानस' में रावण लो तो ये मनस्वी राजा है। ब्रह्मा तो कुछ नहीं है रावण के पास! शंकर को भी उस आदमी ने बांध रखा था! मनस्वी राजा था। 'रामचरित मानस' में जनक और दशरथ यशस्वी राजा थे। लेकिन मेरे राम है तपस्वी राजा-

सब पर राम तपस्वी राजा।
तिनके काज सकल तुम साजा।।

राष्ट्रनायक तपस्वी होना चाहिये, धर्मनायक तपस्वी होना चाहिए। जिसके वचन सादगी से भरे हो, जिसका वेश सादगी से भरा हो और जिसका एक दूसरों के प्रति वर्तन सादगी से भरा हो, वो कलियुग का तपस्वी है। तो साधक तपस्वी होता है। उनमें मधुगात लक्षण हो जाता है। और मधुजात; मधुजात का अर्थ है एक विशिष्ट प्रकार की जात निर्मित हो जाती है। जिसको शंकराचार्य कहते हैं, 'चिदानंद रूपः शिवोऽहं शिवोऽहं।'

न मृत्युर्नशंका न मे जातिभेदः
पिता नैव मे नैव माता च जन्म।
न बंधुर्न मित्रं गुरुर्नैव शिष्यः
चिदानंदरूपः शिवोऽहं शिवोऽहम्।।

इसको कहते हैं मधुजात। तो,

नौमि भौम बार मधुमासा।

मधु बांटा जाय, मधु पिलाया जाय, 'मधु क्षरन्ति सिंधवः।' तुम कथा में आते हो तब दूसरे होते हैं और कथा सुनकर जाते हो, परिवार को पूछो, तुम कैसे लगते हो? आदमी बदलता है; वस्त्र नहीं बदला जा रहा है! 'मानस' से आदमी की वृत्तियां बदली जा रही है। रामकथा कभी पुरानी नहीं होती। नित नूतन होती है। रोज नई हो उसीका नाम रामकथा है। रामजी ने पूछा कि मैं कहा निवास करूं? तो मधु संबंध का निवास बताया कि-

स्वामी सखा पितु मातु गुर जिन्ह के सब तुम्ह तात।
मन मंदिर तिन्ह कें बसहु सीय सहित दोउ भ्रात।।

महर्षि वाल्मीकि के शब्द है। 'मानस' का वाल्मीकि। स्वामी और सेवक में ऐसा संबंध जो कभी टूटे ना वो मधु संबंध है। राम ने करके दिखाया। जटायु को पिता कह सकता है। शबरी को माँ कह सकता है। बंदर-भालू को जो सखा कह सकता है। विभीषण-असुरबंधु को जो सखा कह सकता है। तो जो संबंध में कभी कटुता न आये। हमारे गुरु-शिष्य के बीच कभी द्वेष पैदा न हो। मंत्रों ने कितनी आगे की सुरक्षा की! वेदांत में और भक्ति-मार्ग में भी श्रवण को पहली जगह दी है। परमात्मा और व्यक्ति का संबंध परस्पर मधुमय हो, द्वेषमय ना हो, अमृतमय हो। श्रोता-वक्ता का संबंध परस्पर मधुमय हो।

एक वस्तु याद रखना मेरे श्रावक भाई-बहन, सच्चा बुद्धपुरुष आप को आंतरिक संपदा भी देता है और बहिर् संपदा भी देता है। क्यों? इसलिए ताकि दो संपदा में शाश्वत संपदा कौन है उसका तुम निर्णय कर सको। बुद्धपुरुष जानता है कि बहिर् संपदा नाशवंत है, भीतर की संपदा शाश्वत है; फिर भी दोनों देकर साधक पर छोड़ देता है कि तुम तुलना करो। एक ओर धन की संपदा दी ओर दूसरी और भीतर ध्यान की संपदा दी। अब तुम उसका मूल्यांकन करो। सही में जिसने बुद्धपुरुष का आश्रय किया उसको दोनों संपदा मिली।

कथा-दर्शन

परमात्मा की कथा का गायन ही जप है।
कथा हमें आंतर् शुद्धि का वरदान देती है।
राम सांप्रदायिक तत्त्व नहीं है, राम सार्वभौम शब्दब्रह्म है।
शास्त्र सदैव सिद्धांत देता है, समाधान तो अंदर बैठा कोई बुद्धपुरुष प्रदान करता है।
बुद्धपुरुष को कोई निकट नहीं होता, कोई दूर नहीं होता।
सच्चा बुद्धपुरुष आप को आंतरिक संपदा भी देता है और बहिर् संपदा भी देता है।
गुरु का स्मरण न करो तो चिंता नहीं, गुरुकृपा का स्मरण करो।
जीवन में कोई ऐसा स्थान रखो, जहां कोई आशा के बिना हम जाये।
भरोसा जड़ नहीं होना चाहिए, दृढ़ होना चाहिए।
परमप्रेम भक्ति की उच्चतम अवस्था है।
सहजता जैसी कोई साधना नहीं।
सत्य सहज होना चाहिए। प्रेम सहज होना चाहिए। करुणा सहज होनी चाहिए।
जो सही में सत्यनिष्ठ है वो प्रेमनिष्ठ होगा ही, होगा ही, होगा ही।
करुणा के बिना प्रेम विधुर है। प्रेम की छाया करुणा होनी चाहिए।
मधुर वाणी ये आध्यात्मिक पंचामृत की शर्करा है।
मद्यपान ये वाह–वाह का रस है, मधुपान ये स्वाहा–स्वाहा का रस है।
मद्य कुछ क्षणों के लिए मस्ती देता है, मधु जनम–जनम की मस्ती प्रदान करता है।
गुणीजन दोष में भी गुण दिखेगा और दुर्गुणी किसीमें गुण होगा तो भी दुर्गुण देखेगा।
साधु को बूढ़ा होने का अधिकार नहीं। सर्जक को भी बूढ़ा होने का अधिकार नहीं।
ये जीवन बड़ा मधुर है, बड़ा मीठा है, जीने योग्य है।
मनुष्यता देवताओं को भी दुर्लभ है।

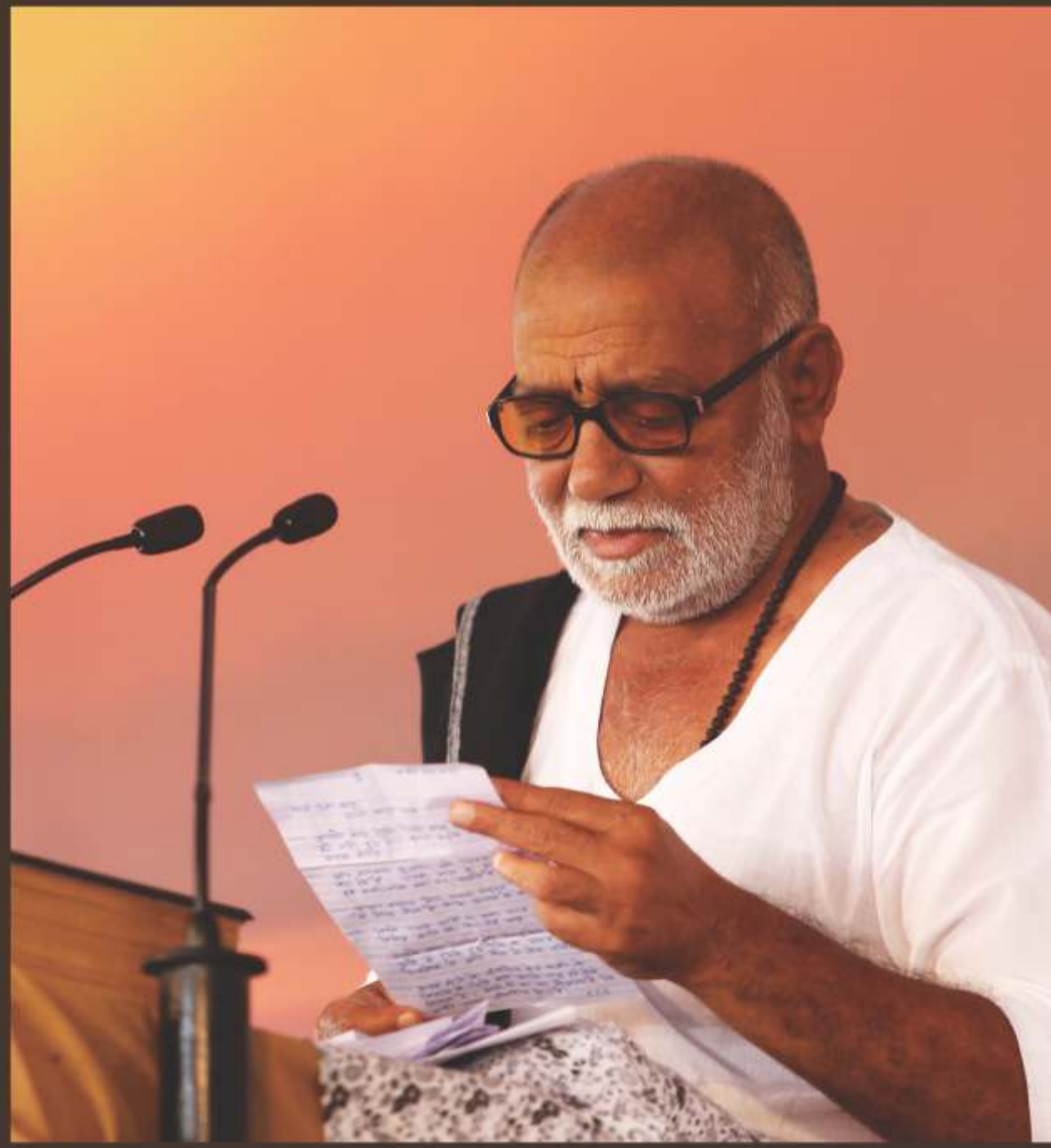

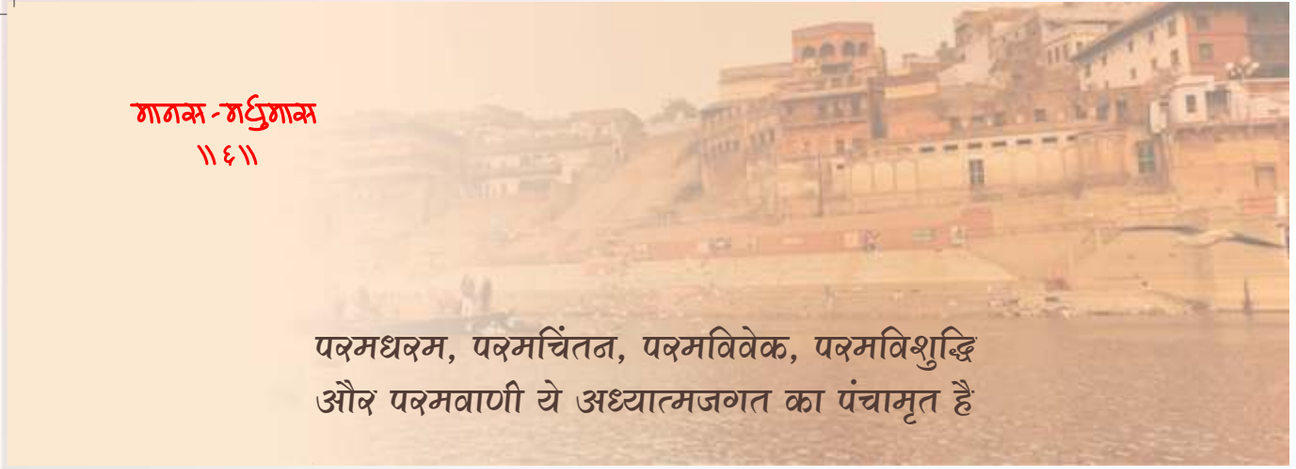

परमधरम, परमचिंतन, परमविवेक, परमविशुद्धि और परमवाणी ये अध्यात्मजगत का पंचामृत है

'मानस-मधुमास', जिसका कुछ विशेष रूप में गायन हो रहा है। 'रामचरित मानस' में मधु का स्वभाव क्या है, उसका वर्णन है। 'रामचरित मानस' में मधु का रूप क्या है, उसका भी वर्णन है। 'रामचरित मानस' में मधु का स्वाद कैसा है, उसका भी वर्णन है। मधु मानी मधुर; मधु मानी मीठा; मधु मानी विश्राम; मधु मानी शांति; मधु मानी शाश्वत मस्ती; मधु मानी अमृत। बहुत अर्थ है लेकिन मधु को समझाने के लिए मूल अर्थ है, मधु मानी मध, हनी। मधु पवित्र भी बहुत है। हमारे यहां पंचामृत जब हम बनाते हैं तो दूध, दहीं, घी, साकर और मध इन पांचों का मिलन हम पंचामृत कहते हैं। 'मधुपर्क' शब्द आता है। 'महाभारत' में आता है, गुरु अपने शिष्य के पास साल में एक ही बार जाय तो उस गुरु का पूजन मधुपर्क से करना चाहिए। 'महाभारत'कार का वक्तव्य है कि ससुर अपने दामाद के घर साल में एक ही बार जाय तो ये ससुर का मधुपर्क से पूजन करना चाहिए। ऋत्विज अपने यजमान के घर साल में एक ही बार जाय तो मधुपर्क से उसका सन्मान करना चाहिए। गुरु अपने शिष्य के पास बार-बार जाय तो शिष्य तो उनका सन्मान करेगा ही लेकिन वो अपने आप अपनी सन्मान की योग्यता क्रमशः गंवा देगा है! पंचामृत पांच चीज़ का मिलन है। आध्यात्मिक दृष्टि से ये पांच चीज़ क्या है? दूध; तो दूध है, गौ का दूध, माँ का दूध जो है सो है। मंदाकिनी चित्रकूट में बहती है। उनकी धारा को पंचधारा कहा है। ये दूधधारा है भावजगत की। लेकिन दूध की परिभाषा 'रामचरित मानस' में 'उत्तरकांड' में दी है।

परम धर्ममय पय दुहि भाई ।

आध्यात्मिक पंचामृत क्या? वैसे तो ये पदार्थों और प्रवाही को मिलाकर हम पूजा के लिए पंचामृत बना लेते हैं। ये तो है ही। सूक्ष्म क्या है? जहां धर्म नहीं, परमधर्म हो। धर्म और परमधर्म में तुलसी क्यों थोड़ा फ़ांसला बनाते हैं?

आज मुस्लिम भाई लोग आये हैं। ईस्लाम धर्म के मारग से परमात्मा की, अल्लाह की इबादत करनेवाले। आज व्यासपीठ के प्रति अपना आदर पेश करने के लिए आये और ईस्लाम धर्म के पथ से वो परमात्मा की-अल्लाह की बंदगी करते हैं, ये धर्म है लेकिन ईस्लाम होते हुए हिन्दु धर्म को आदर देने के लिए आते हैं ये परमधर्म है। और हम भी ईस्लाम धर्म की कोई मेहफ़िल हो तो सनातन धर्मावलंबी उसको इतना ही आदर दे तो वहां धर्म वही रहता है, एक कदम ओर आदमी उपर उठता है जिसको परमधर्म कहा जाता है।

परमधर्म ये दूध है और दूध कभी हिन्दु नहीं होता, कभी मुस्लिम नहीं होता। दूध ना ईसाई होता है, ना बौद्ध होता है, ना जैन होता है। दूध दूध है। हिंदु का दूध गेरुआ हो और ईस्लाम का हरा रंग का हो ऐसी विश्व में व्यवस्था नहीं है। दूध सदैव श्वेत होता है। तो 'मानस' परमधरम की भी व्याख्या करता है-

परम धर्म श्रुति बिदित अहिंसा ।
पर निंदा सम अघ न गरीसा ।।

परमधर्म क्या? धर्म के नाम पर कोई किसी की हिंसा न करे ये परमधर्म। शास्त्रों के गलत अर्थघटन से कोई किसीको ठेस ना पहुंचाये वो परमधर्म। 'अहिंसा परमो धर्मः।' परमधरम वो है जो करुणा से भरा है। परमधर्म है सत्य। 'श्रीमद् भागवतजी' में लिखा है, 'सत्यं परं धिमही।' 'मानस' में लिखा है, परम प्रेम राम और भरत का। तो सत्य, प्रेम, करुणा; अहिंसा मानी करुणा, ये है परमधर्म, ये है दूध।

एक आध्यात्मिक पंचामृत निर्मित करे मेरा समाज, मेरी सुंदर पृथ्वी, मेरी प्यारी वसुधा, जिसमें परमधरम का दूध हो। पंचामृत का दूसरा भाग है दहीं। आध्यात्मिक पंचामृत में दहीं है। दहीं को मथना पड़ता है। दहीं मंथन चाहता है। इसलिए मेरी व्यासपीठ दहीं उसको कहेगी कि जो निरंतर चिंतन-मनन करता है एक ऋषि और एक फ़कीर की तरह। ऋग्वेद में लिखा है 'ऋषिः स वो मनुहितः।' कौन ऋषि? जो जगत में प्राणीमात्र के कल्याण का चिंतन करता है वो ऋषि। और पूर्वग्रह से कोई वेद की बात न माने तो कौन समझायें?

आपने सोचा है, ये जो पूरा अस्तित्व है वो खाली है। नील आकाश, लेकिन खाली नहीं है, बहुत भरा है; यद्यपि खाली है। विरोधाभासी निवेदन है! हमारा बुद्धि का जितना अंश इनमें से कुछ शुभ तत्त्वों को ग्रहण कर लेगा उसने अस्तित्व से मंत्र ग्रहण कर लिया और ऐसे शुभ तत्त्वों को ग्रहण करना उसीका नाम ऋषि है। एक बात याद रखना, कोई ऋषि मंत्र बनाता नहीं है। वो मंत्रदृष्टा है; मंत्र को देखता है। ऋषिः दृष्टा। ऋषि चमक को देखता है, फ़कीर चमक को देखता है। ऋषिभाव में सर्जक भी इस चमक को पकड़ता है, यस। अवलोकन; नीरखो, पकड़ो।

एना घडनाराने परखो,
आ कोणे बनाव्यो अमर चरखो।

भावेश पाठक का शे'र है-

नींद की गोलियां उसे भी दे,
चांद को भी यही बिमारी है।
बदनज़र से कभी नहीं देखा,
तेरी तसवीर भी कंवारी है।

ऋषि उसको कहते हैं जो मंत्रदृष्टा है, जो विश्व का कल्याण करने का व्रत लेकर बैठा है। निरंतर उसके मन में कुछ चिंतन-मनन का दहीं जम रहा है। और दहीं प्रतीक्षारत है मंथन के लिए। तो अध्यात्मजगत के पंचामृत का दहीं है कोई ऋषि आत्मा का विश्व कल्याण के लिए चलता चिंतन-मंथन। फ़कीरों-संतों का एक चिंतन-मंथन चलता रहता है केवल विश्व कल्याण के लिए। एक अंदर घमासाण चलता है! दधिमंथन; उसके चिंतन तुम्हें छू ले उसकी प्रतीक्षा करो।

निर्मल विवेक, विशुद्ध ज्ञान ये है घी। 'बुद्धि सिरावै ग्यान घृत।' जिसमें ममता का हर कचरा निकल चुका है। ममता ही कीटु है। जो ज्ञान निराभिमान की दशा को प्राप्त कर ले वो है केवल ज्ञान, वो है विशुद्ध ज्ञान, वो है परम ज्ञान की अवस्था, ये है घी। परम समझ, परम धरम, परम चिंतन ये तीन दूध, दहीं, घी। चौथा साकर। पंचामृत में साकर क्या है? साकर आदमी की मीठास है। आदमी की मधुर बोली, आदमी का मधुर स्मरण, आदमी का मधुर स्पर्श, आदमी का मधुर वक्तव्य ये है शर्करा। जिस बोली के पीछे कोई नेटवर्क ना हो। कोई योजना ना हो। निर्मल वाणी। कोई मेल नहीं, ऐसी शर्करा। शरीर कौन है, वो मत देखना। मधुर वाणी देखना। 'मानस' में लिखा है-

मधुर बचन बोले जिमि कागा ।

कागभुशुंडि बोलते हैं, है तो कौआ लेकिन बोलते हैं मधुर बचन। तो मधुर वाणी ये आध्यात्मिक पंचामृत की शर्करा है। और शहद, मध, हनी, मधु। जिसका कई अर्थों में हम आप के साथ संवाद कर रहे हैं। मधु मानी शांति, विश्राम, मधुर जो भी अर्थ लगाओ। तो, परम धरम, परम चिंतन, परम विवेक, परम विशुद्धि और परमवाणी, ये पांच को मिला देना अध्यात्म जगत का पंचामृत है। तो, 'रामचरित मानस' में मध-हनी, इनका रूप का वर्णन है। 'रामचरित मानस' में मध की प्रकृति का वर्णन है, स्वभाव का वर्णन है 'अयोध्याकांड' में।

धर्म जब तक आख़िरी व्यक्ति तक नहीं जाएगा, तब तक धर्म की व्याख्यायें रहेगी, धर्माचरण नहीं होगा। बहुत विश्वास से भील लोग 'रामचरित मानस' में बोले हैं-

सपनेहुँ धरमबुद्धि कस काऊ ।
यह रघुनंदन दरस प्रभाऊ ।।

यह कौल, किरात, भील जब राम के नजदीक आते हैं चित्रकूट में तो कहते हैं, हमारे मन में सपने में भी धर्मबुद्धि नहीं लेकिन आज हम आप के इतने करीब आ गये हैं! रघुनंदन का दर्शन आख़िरी आदमी को निकट ला देता है वैसे 'रामचरित मानस' का दर्शन भी आख़िरी व्यक्ति को निकट ला देता है। कौल-किरात कहते हैं, हमारे में सपने में भी धरमबुद्धि नहीं थी लेकिन आज हम प्रेम से भर गये क्योंकि 'यह रघुनंदन दरस प्रभाऊ।'

हम जड़ जीव जीव गन घाती ।

ये वंचितों की आवाज़ है 'मानस' में; ये उपेक्षितों की आवाज़ है 'मानस' में। समग्र नागरी समाज को छोड़कर राघव निकल पड़े बिना जुते बनकर की ओर। क्यों? रावण को मारना था? अयोध्या में आंख बंद करते तो रावण क्या पूरे खलक का नाश हो जाता! लेकिन प्रभु को लगा कि मैं निर्गुण ब्रह्म यदि सगुण हुआ हूं और सगुण होने के लिए मेरी सगुणता का लाभ आख़िरी व्यक्ति को ना मिले तो मेरी सगुण लीला का कोई अर्थ नहीं रहता। चल पड़े। आदिवासी लोग राम से कहते हैं, हम जड़ जीव है और जीवों के समूहों के हत्यारे हैं।

कुटिल कुचाली कुमति कुजाती ।

हम कपटी है। हम कुमति है। हम कुजात है। आत्मनिवेदन तो देखो! और हमारा दंभ देखो! हे अवधवासी, तुम पुन्यशाली हो, हम तो नीच निषाद है। आज कोई मिलानेवाला आया। ये आदिवासी मधु की व्याख्या करता है कि ये मधु का रूप है, ये मधु का स्वभाव है और मधु का एक विशिष्ट स्वाद है।

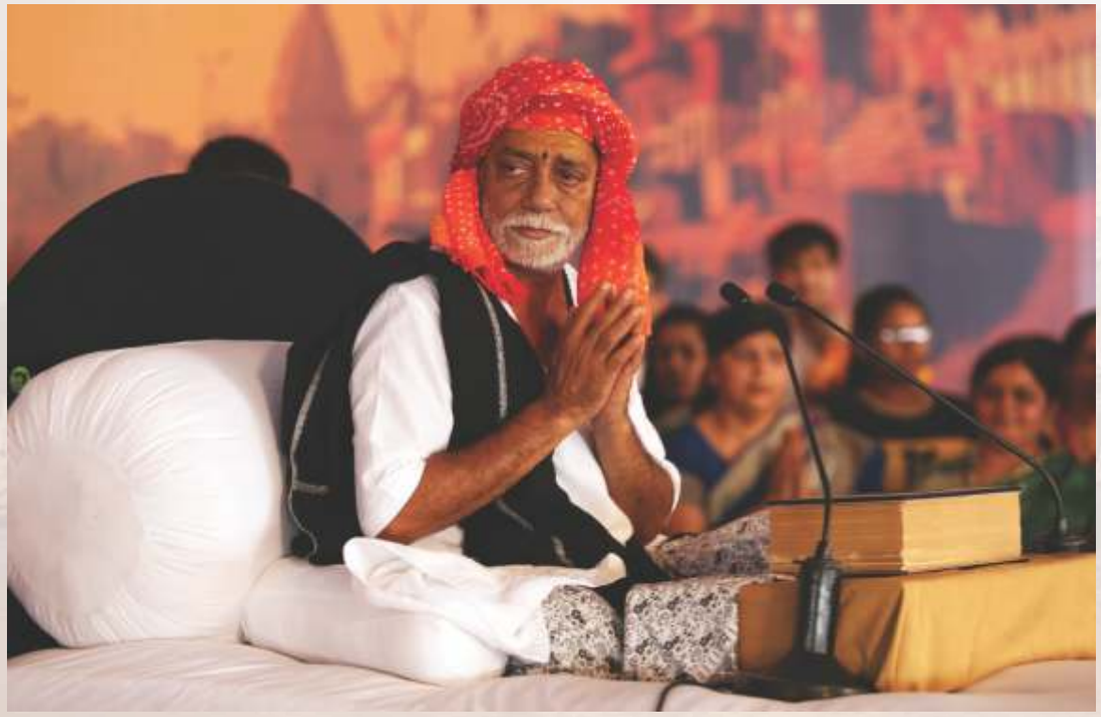

कोल किरात भिल्ल बनबासी ।
मधु सुचि सुंदर स्वादु सुधा सी ।।

एक बहुत जानकार विद्वान धर्मज्ञ, शास्त्रज्ञ, वेदज्ञ कह लो, वो अपने सभी ग्रंथ अपने सिर पर रखकर एक संत के पास गया। तो एक संत-फकीर बैठा है। पहुंचा हुआ बुद्धपुरुष। वो संत से निवेदन करता है कि बाबा, मुझे परमात्मा की प्राप्ति करा दो। तो मुस्कुराते हुए संत ने कहा कि पहले एक काम करो, ये सिर पर बोज़ है वो पहले उतार दो, विश्राम करो। उसको लगा कि मेरा ज्ञान नीचे कैसे उतारूं? मेरा ज्ञान तो ऊंचा है! लेकिन था साहसी, सोचा, कुछ भी हो, एक बार ये जानकारी की गठरी नीचे ऊतारूं। नीचे ऊतार दी। फिर महात्मा ने कहा चलो, अब हम चर्चा शुरू करें। बोले, परमात्मा की प्राप्ति करा दो। पूछते-पूछते भी ये ज्ञानी जो शास्त्र-ग्रंथ सब थे उस पर एक हाथ पकड़े रखा कि छूट ना जाय! महात्मा ने कहा, 'तूने किसीसे प्रेम किया है?' 'आप महात्मा होकर प्रेम की बात करते हो?' बोले, 'तुम्हें पहले प्रेम की जानकारी लेनी पड़ेगी फिर परमात्मा का दर्शन करा दूं, वादा। एक महिने के बाद मिलेंगे।' महात्मा पर विश्वास था, 'ये आदमी बोलता है, थोड़ा अनुभव तो करूं।' एक महिना गया, दो गया, छ महिना गया। वो महात्मा उसकी प्रतीक्षा कर रहा था। वो साधु उसको खोजने गये। उसके गांव गया तो अपने आंगन में बैठकर वो जार-जार रो रहा है! चेहरे पे मुस्कुराहट। कभी नाचता है, सुतीक्ष्ण की तरह कभी गाता है। और संत ने आकर उसका हाथ पकड़ा, 'छ महिना बीत गया, तू आया नहीं? मुझे तेरे पास आना पड़ा! मैं तुम्हें परमात्मा की प्राप्ति करानेवाला हूं।' उसने कहा, 'किसकी प्राप्ति करे? मैंने प्रेम कर लिया, परमात्मा शेष बचा ही नहीं!' प्रेम ही परमात्मा है।

रामहि केवल प्रेमु पिआरा ।
जानि लेउ जो जाननिहारा ।।

अहमद फ़राज़ का शे'र है-

किताबों से मिशाल दूं कि खुद को सामने रख दूं फ़राज़।
मुझसे पूछ बैठा कि मोहब्बत किसको कहते हैं?

इसलिए सूफ़ियों की एक किताब कोरी किताब है, कुछ लिखा नहीं। भक्ति किसको कहे वो बताना पड़े! भक्ति प्रगट होती है तब जगाने की जरूरत नहीं। पूरा त्रिभुवन जग जाता है। एक व्यक्ति में जब प्रेम अंश प्रगट होता है, माहौल बदल जाता है। याद रखना, दुन्यवी सुख मेहनत से ही मिलेगा, लेकिन अंत:करण का सुख किसीकी रेहमत से ही मिलेगा। मेरा एक व्यासपीठ का सूत्र है, देहशत से कुछ नहीं मिलता। आप काम करो, हर काम में शंका करो; होगा? नहीं होगा। देहशत से कुछ नहीं होगा, महेनत से कुछ-कुछ होगा और रेहमत से सब कुछ होगा। इसका मतलब समाज निष्कर्म बन जाय ये मैं नहीं कहता। पुरुषार्थ करना चाहिए लेकिन बिना रेहमत परम सुख की उपलब्धि नहीं। समय मिले रेहमत का स्मरण करो कि मेरी दुकान कौन चलाता है? मेरी श्वास कौन चला रहा है? गुरु का स्मरण न करो तो चिंता नहीं, गुरुकृपा का स्मरण करो।

बाप, 'महाभारत' की घटना की ओर आप का ध्यान आकृष्ट करना चाहूंगा कि जब युद्ध निश्चित हुआ। अर्जुन और दुर्योधन भगवान कृष्ण के पास जाते हैं सहाय के लिए। उसी समय भगवान कृष्ण विश्राम में है। अर्जुन भगवान कृष्ण के चरणों के पास बैठ जाता है। दुर्योधन में मूढ़ता है। अहंकार है। दुर्योधन का बाप अंधा था। दुर्योधन बेहरा था। इसको लगा कि मैं इस ग्वाल के पैरों में बेठनेवाला आदमी हूं? मैं कौरवश्रेष्ठ हूं। तो मस्तक के पास बैठ गया। और भगवान कृष्ण जागे तो स्वाभाविक था कि जागते ही पहली दृष्टि उसकी अर्जुन पर पड़ी, 'धनंजय, कब आये?' 'योगेश्वर, प्रणाम। अब आये, दुर्योधन भी आये हैं।' 'कुछ खास काम?' 'हम आप से प्रार्थना करने आये हैं कि युद्ध होनेवाला है। आप अपनी भूमिका क्या रखोगे?' बोले, 'मैं तो अकर्ता ईश्वर, मैं कुछ करता नहीं। एक के पक्ष में केवल नारायणी सेना होगी, मैं कुछ करनेवाला नहीं, साथ रहूंगा, युद्ध नहीं लडूंगा।' दुर्योधन बोला, 'पहले मैं आया हूं तो मुझे मांगने का अधिकार है।' तो मांग लिया नारायणी सेना। कृष्ण ने कहा, 'तो आप के पास मेरी नारायणी सेना रहेगी और लड़ेगी आप की ओर से। और मैं अकर्ता अर्जुन के पक्ष

में।' निर्णय हो गया। यहां मुझे ओशो का वक्तव्य याद आता है। उनकी सब बातें मैं ना कुबूल करूं, मुझे जो अच्छा लगे वो तो कहूंगा। उसमें ओशो भी नाराज़ नहीं होते। प्यारा निवेदन है कि अर्जुन कृष्ण को ले लेता है। विजय हो चुकी, औपचारिकता बाकी रही। जो चरण में बैठ गया, शरण ले ली, विजय हो चुका। ओशो कहते हैं।

कृष्ण ने फिर कहा, 'धनंजय, सोच लेना। मैं कुछ करूंगा नहीं। तेरा रथ चलाउंगा। लेकिन हाथ में हथियार नहीं लूंगा, निहत्था होउंगा।' अर्जुन मन में मुस्कुरा रहे! जिसका रथ गोविंद चलाये, हजार बार हार जाउं तो भी विजय है। अर्जुन के दिल में विजयोत्सव हो गया। कोई युद्ध नहीं किया। शस्त्र नहीं लिया है, रथांग लिया है, रथ का पहिया लिया है। रोज युद्ध पूरा होते कृष्ण रथ से उतरते और अर्जुन को फिर नीचे उतरने को कहते। आज पहली बार युद्ध विराम होने के बाद उसने अर्जुन को कहा, 'अब तू पहले उतर जा।' ये अकर्ता है, लेकिन सब कुछ उसीने किया है वो कोई नहीं जानता। गुरु क्या है? तुम्हारे लिए जप करने बैठेगा? बुद्धपुरुष कुछ नहीं करता। बिलकुल अकर्ता की तरह होगा। लेकिन घटना घटती है तो मानना पड़ता है, सब कुछ उसने किया। अर्जुन ने कहा, 'पहले तो आप नीचे उतरके मुझे उतरने को कहते हो।' बोले, 'उतर, बकवास बंद!' और साहब, घटना ये है 'महाभारत' की। कृष्ण जैसे नीचे उतरे तो धजा से हनुमान निकल गये! यहां कृष्ण रथ से उतरे, यहां हनुमान धजा से उतरे। उसी समय भड, भड, भड रथ में आग लग गई और रथ जल गया! 'गोविंद, ये क्या?' 'तू ये मानता था धनंजय कि तेरे पास ही अग्नि के बाण थे, दूसरों के पास नहीं थे! तेरे से कई गुनी विद्या उन लोगों के पास थी। अग्नि के बाण तेरे रथ में आते थे लेकिन नहीं जलते थे क्योंकि बैठे थे दो; गुरु-गोविंद दोनों बैठे थे। मैं हूं अकर्ता पर सब कुछ करनेवाला मैं ही तो हूं। और इस देहरथ से भी कृष्ण निकल जाता है तो जलाने के सिवा बचता क्या है? रेहमत गुप्त होती है। बौद्धिक स्तर से नहीं समझ में आती।

> याद रखना, दुन्यवी सुख मेहनत से ही मिलेगा, लेकिन अंत:करण का सुख किसीकी रेहमत से ही मिलेगा। मेरा एक व्यासपीठ का सूत्र है, देहशत से कुछ नहीं मिलता। आप काम करो, हर काम में शंका करो; होगा? नहीं होगा। देहशत से कुछ नहीं होगा, महेनत से कुछ-कुछ होगा और रेहमत से सब कुछ होगा। इसका मतलब समाज निष्कर्म बन जाय ये मैं नहीं कहता। पुरुषार्थ करना चाहिए लेकिन बिना रेहमत परम सुख की उपलब्धि नहीं। समय मिले रेहमत का स्मरण करो कि मेरी दुकान कौन चलाता है? मेरी श्वास कौन चला रहा है? गुरु का स्मरण न करो तो चिंता नहीं, गुरुकृपा का स्मरण करो।

मैं फिर से कहूं, आप अकर्मण्य मत बनो। आप माला मत छोड़ दो। आप पूजा-पाठ मत छोड़ दो। आप तीर्थस्नान मत करो, ऐसा मैं कभी नहीं कहूंगा। ये सब करो, पर यदि ये न कर सको तो चौबीस घंटों में दो मिनट किसी बुद्धपुरुष की रेहमत को याद करो। हम सब पर कोई न कोई बुद्धपुरुष का कर्म काम कर रहा है, दिखता नहीं। तुझे देते नहीं देखा, लेकिन मेरी जोली भरी देखी! ये प्रत्येक की निजी अनुभूति होती है। लेकिन बौद्धिकता से ये समझ में नहीं आता। अब परमात्मा को क्या पाना? मैंने प्रेम को पा लिया। उस पंडित ने कहा। रेहमत से काम बन गया। 'गीता' में लिखा है, 'क्षिप्रं भवति धर्मात्मा।' क्षिप्रं मीन्स सद्य, तत्क्षण, उसी क्षण। 'मानस' में आया है-

करउँ सद्य तेहि साधु समाना ।

तत्क्षण मैं उसको साधु बना देता हूं। हम सब की मौज, ये आनंद; कारण है किसीकी रेहमत। ये भील लोग, पर्णकुटी बनाकर, अंकुर से बांध और उसे कंद, मूल, फल भरके अवधवासीओं को देते हैं। और अवधवासी उसको मोल देने लगे, लेकिन 'मोल न लेहीं।' हम मोल नहीं ले सकते। तो क्या? बोले, 'फेरत राम दोहाई देहीं।'

ईंधनु पात किरात मिताई ।

हमारी दोस्ती लकड़ी और पत्तों से है।

यह हमारी अति बड़ि सेवकाई ।

लेहिं न बासन बसन चोराई ।।

एक वस्तु समझना, शास्त्र कहता है, स्वर्ग पुण्य के बिना नहीं मिलेगा और पुण्य धन के बिना नहीं हो सकता और धन किसीके शोषण के बिना नहीं होता और पाप, अपराध शोषण से आरंभ होता है। कहीं ना कहीं थोड़ा शोषण करना पड़ेगा; ये सूत्र है। एक लाख रूपये का पुण्य करो तो उसमें कुछ न कुछ पाप होगा ही। मैं धन की आलोचना नहीं कर रहा हूं। लेकिन उसके पीछे रही मूल्यांकनी दृष्टि समझना चाहिए। तो, वो गरीब लोग कहते हैं, हमारी मित्रता दो से और चोरी दो से। ईंधन और पात के साथ हमारी दोस्ती। और हम दूसरों के पात्र बर्तन और वस्त्र उसके बिना कोई चोरी नहीं करता। छोटे आदमी की चोरी भी छोटी होती है। बड़ों की चोरी भी बड़ी होती है। न हो उसको नमन। मंदिर बनवाने से तुम्हारे घर जो तुम्हारे नौकर-चाकर बीस-पच्चीस साल से तुम्हारे बर्तन कर रहे हैं उसका तो झोंपड़ा बनवा लो! और ये मेरी अपील मेरे व्यासपीठ पर श्रद्धा रखनेवाले सभी कर रहे हैं उसकी मुझे खुशी है। फिर क्या कहते हैं-

पाप करत निसि बासर जाहीं ।

रात-दिन हे अवधवासी, पाप करने में हमारे दिन बीतते हैं। और क्यों पाप करते हैं?

नहिं पट कटि नहिं पेट अघाहीं ।

कटि भाग का वस्त्र भी हम को नहीं पाप से प्राप्त हुआ, न पेट का खाड़ा पुर सके इतना भोजन मिला। हम जीवगण की हत्या करनेवाले लोग कपटी, कुमति हम लोग।

सपनेहुँ धरमबुद्धि कस काऊ ।

क्या अहोभाव है! सपने में भी हमारे में धरमबुद्धि नहीं हो सकी लेकिन आज हम आप को लुंट नहीं रहे हैं। आप का स्वागत करते हैं। ये सब राम के दर्शन से आया। किसीका दर्शन ऐसा होता है कि उपदेश नहीं कायाकल्प, हृदयकल्प हो जाता है। ये रघुनाथ के दर्शन का फल है। अवधवासी लोग उनके भाग्य की सराहना करने लगे। सब आनंद में डूब गये जैसे कि पहली बारिस हो और जमीन में डूब गये दादुर पुष्ट हो जाय, मयूर नाचने लगे, मेढ़क कूदने लगते।

सही में जो मध है उसका स्वभाव पहले बताया, शुचि। कौन अमृत, कौन विश्राम? स्थूल मध की बात छोड़ दीजिए। हमारे यहां एक संस्कार है, बालक पैदा होता है तब मधुप्रासन संस्कार। बालक की जीभ पर शहद लगाया जाय उसको मधुप्रासन कहते हैं। और मेरी सलाह है, मधु को थोड़ा गंगाजल के साथ लगाया जाय बालक की जीभ पर तो और मधु हो जाये। गंगा नदी नहीं है, ये देवी है। अंगद ने जो रावण की सभा में प्रश्न उठाये उसमें लिखा है, गंगा नदी नहीं है। ये प्रवाह हमारे जीवन का प्रवाह है। ये प्रवाह जह्नुमुनि की उपकारकता का प्रवाह है। ये प्रवाह शंकर की जटा की मानसिकता का प्रवाह है। और ये प्रवाह पितामह ब्रह्मा के कमंडल का प्रवाह है। ये केवल नदी नहीं। ये हमारा परिचय है।

'मधु' शब्द का स्वभाव क्या है? मधु के स्वभाव का वर्णन चित्रकूट के लोग करते हैं। उसका स्वभाव शुचिता; पवित्रता उसका स्वभाव है। आनंद पवित्र हो; दूसरों की मजाक करके आनंद लो वो पवित्र आनंद नहीं। आनंद सहजानंद हो।

परमानंद पूरि मन राजा ।

कहा बोलाइ बजावहु बाजा ।।

आनंद का नाम परमानंद है। ज्ञान मारग का आनंद ब्रह्मानंद है। परमानंद और ब्रह्मानंद दोनों का अवतरण मधुमास में हुआ। त्रिकाल में जो पवित्रता रखे वो मधु का लक्षण है। अब मधु का रूप। वनवासी कहते हैं, मध का रूप है सुंदर। मधु सुंदर लगता है। और स्वाद सुधासी। उसका स्वाद है अमृत जैसा।

कथा के क्रम में याज्ञवल्क्य महाराज के सामने भरद्वाजजी ने जिज्ञासा रखी कि रामतत्त्व क्या है और याज्ञवल्क्य ने शिव चरित्र से श्री गणेश किया। ये था सेतुबंध। एक बार त्रेतायुग में शिव कथा सुनने के लिए कुंभज के आश्रम में जाते हैं। सती साथ में है। सती ने कथा नहीं सुनी। बौद्धिक बाप की बेटी है। शिव ने सुख से कथा सुनी। लौट रहे थे। त्रेतायुग में रामजी की ललित लीला चल रही थी। सीता के अपहरण के बाद लीला करते ठाकुर रोते-रोते जानकी की खोज कर रहे थे उसी समय शिव और सती वहां से गुजरे। अंतर्यामी शिव ने दूर से प्रभु के दर्शन करते 'सच्चिदानंद' कहके प्रणाम किया। सती को संदेह हुआ, ये आदमी रो रहा है और भगवान शिव उसको 'सच्चिदानंद' कहे? शिव ने सब समाधान दिया। पर सती ना मानी। परीक्षा करने हेतु राम की कसौटी करने जाती है। सीता का वेश लिया। पकड़ी गई। शिव के पास आकर झूठ बोली। भगवान शिव ने संकल्प किया, सती का ये शरीर जब तक रहेगा तब तक मेरा और उनका सांसारिक संबंध नहीं रहेगा। सती का त्याग किया।

शिव को अखंड समाधि लग गई। सत्तासी हजार साल बीत गये। शिवजी समाधि से बाहर आये। सती ने सोचा, जगतपति जागे। सन्मुख बैठ गई। देवता लोग विमान लेकर कैलास से निकले। सती ने पूछा, ये देवलोग कहां जा रहे हैं? तो बोले, आप के पिताजी यज्ञ कर रहे हैं। हमारे साथ मनदु:ख है इसलिए आप को नहीं बुलाया। वो अपमान के लिए यज्ञ कर रहे हैं। सती मानी नहीं और यज्ञ में जाने की जिद करती है। दक्षयज्ञ में शिव अपमान सहा नहीं गया तो अग्निकुंड में अपने देह को जलाकर सती भस्म हो गई। जलते समय सती ने जन्म-जन्मांतर तक मुझे शिव ही प्राप्त हो ऐसा मांगा। दूसरे जन्म में पार्वती के रूप में प्रगट हुई। नारदजी ने आकर पार्वती का नामकरण संस्कार किया और शिव के लिए तप करने को कहा। सती तप करती है।

सती के वियोग में घूमते शिव एक जगह बैठे और रामभद्र प्रगट हुए। शिव से कहा, आप से कुछ मांगने आया हूं। सती का त्याग किया वो सती हिमालय के घर पार्वती के रूप में आई। वो आप को पाना चाहती है तो आप पार्वती का पाणिग्रहण करे। शिव ने आज्ञा सिर पर धारण की। अवकाश में ताड़कासुर नामक राक्षस उत्पन्न हुआ जिन्होंने समाज को पीड़ित-दंड़ित किया। शिव की शादी हो और उनके घर पुत्र हो तो ताड़कासुर मरेगा। कामदेव शिव की समाधि भंग करने आता है। स्वार्थी देवताओं आकर शिवजी की प्रशंसा करने लगे। शिव ने कारण पूछा तो कहने लगे, देवलोक में किसीकी शादी नहीं होती, सब रसहीन हो गये हैं! हमने सोचा आप से प्रार्थना करे, आप शादी करे। देवताओं के सामने शिव ने हां बोल दी।

दूल्हा तैयार हो रहा है। बाबा नंदी पर बैठे। क्यों? नंदी धर्म का प्रतीक है। सवारी धर्म की हो, अधर्म की नहीं। पूरी दुनिया से भूत-प्रेत आये। बारात हिमाचल प्रदेश पहुंची। सब के पीछे दूल्हा आया। पार्वती की माँ मैना दूल्हे का परिछन करने आती है। बाबा का रूद्र रूप देखा और हाथ से आरती की थाली गिर गई! बेहोश हो गई! नारद ने कहा, तुम्हारे घर में कन्या के रूप में जो बैठी है, ये पूरे जगत की माँ जगदम्बा है और वो शिव परमतत्त्व महादेव है। सखियां पार्वती को विवाह मंडप में ले आई और शिवजी ने पार्वती का पाणिग्रहण किया। विवाह संपन्न हुआ।

पार्वती संग महाराज कैलास पहुंचे। शिव-पार्वती का नित नूतन विहार है। समय मर्यादा पूरी हुई तब छ मुखवाले कार्तिकेय का जन्म हुआ। उसने ताड़कासुर का निर्वाण किया। महादेव सदा वटवृक्ष की छांव में सहज आसन में बिराजते हैं और योग्य समय देखकर पार्वती जिज्ञासा करती है, 'हे भगवन्! गत जन्म मैं सती थी। मेरे मन में रामतत्त्व के बारे में असमंजसता है। आप रामकथा सुनाकर बताईये कि तत्त्वत: रामतत्त्व क्या है?'

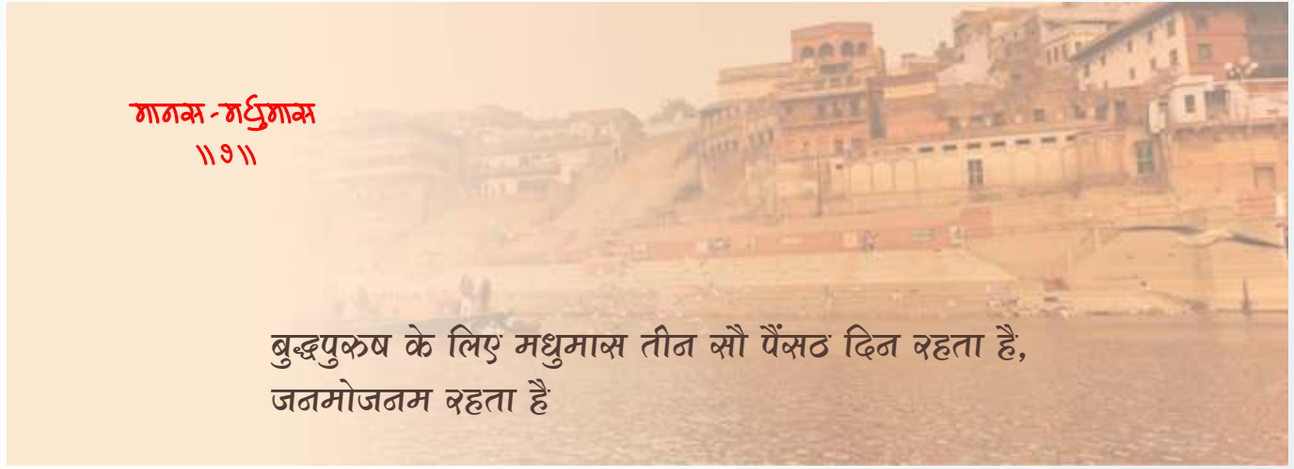

**बुद्धपुरुष के लिए मधुमास तीन सौ पैंसठ दिन रहता है,
जनमोजनम रहता है**

'मानस-मधुमास' की संवादी चर्चा हम साथ में कर रहे हैं। यहां मधु का एक केवल शहद ही अर्थ नहीं है। ये समग्र सार के रूप में 'मधु' शब्द यहां लिया जा रहा है। मधु मानी अमृत, विश्राम, शांति, परम सत्य। मधु मानी परमप्रेम, परमकरुणा, मधुर वचन, मधुर लीला, मधुर धाम, मधुर श्रवण, मधुर स्पर्श, मधुर दर्शन। हम मधु मास की परिक्रमा कर रहे हैं।

चिठ्ठी है कि 'कल बापू, आप ने कहा था कि पीछे बैठकर भी सुनो तो पता लगे! हम व्यासपीठ की बात सुनकर आज पीछे बैठकर कथा सुन रहे हैं।' मेरा इरादा ये नहीं कि मैं आप को पीछे धकेल दूं। मेरा कहना ये है कि आगे बैठकर सुनना तुम अपना अधिकार मत समझ बैठो; ये पीछेवालों की उदारता का फल है ऐसा समझो। मेरा इरादा समझो। ये न सोचो कि आगे बैठे इससे मेरी उपेक्षा है। लेकिन कभी इसी मस्ती से यदि पीछे बैठना पड़े तो भी यही मस्ती रहे तभी समझो कि तुम्हारी कथा की रुचि पक्की है। कथा तुम्हारा शौक न बने, तुम्हारा स्वभाव बने। और जब स्वभाव बनेगा तब कहीं भी पंडाल में हो तो भी आप सुन लोगे। पंडाल में न हो तो भी आप सुन लोगे। इसकी महक चारों ओर गुंजेगी क्योंकि चारों ओर भगवत्कथा है। जैसे गंगा आसमां में भी है, धरती पर है, पाताल में है; ये त्रिभुवन में बहती रामकथा है। सब कथा महान है। मैं कोई भेद नहीं कर रहा हूं लेकिन हरिकथा, भगवत्कथा, इसकी तुलना में विश्व में कोई कथानक नहीं।

'मानस' में कौन कथा घटियां है? कौन पंक्ति घटियां है? तुम्हारे पूर्वग्रह निम्न और श्रेष्ठता का अभिप्राय दे दे तो जिम्मेवार आप हो। कथा में आप नहीं होगे तो भी स्वभाव आप के साथ रहेगा। वस्त्र बिलग हो सकता है, वृत्तियां बिलग होगी? आवरण बिलग हो सकता है, अंत:करण बिलग हो सकता है? इम्पोसिबल। कथा हमारा-आप का स्वभाव बने। कथा तो शिव ने गाई है। कथा तो शुक ने गाई है। कथा तो वाल्मीकि-व्यास ने गाई है। हम तो उनके पदनक्ष पर जितनी अपनी अक्ल हो, सावधानी से चल रहे हैं। कथा सुधा है, कथा मधु है।

आज मेरे पास सत्य के बारे में छोटा-सा विवरण आया है एक पन्ने में कि बापू, क्या सहजता ही सत्य नहीं है? क्या सत्य को खोजा जा सकता है? इम्पोसिबल टोटली। सत्य खोजा नहीं जा सकता। एक घटना, यदि मैं पहले ही कह दूं कि तीन महापुरुषों ने एक ही सूत्र में ये बात कही। मैं इस कोटि में नहीं आता हूं, वो वो है। मैं आप की कोटि में आता हूं। हम सब जैसे जिस धरा पे हैं, जिस लेवल पे हैं। वे तो महापुरुष है। मध्यप्रदेश के एक संत हुए राम दुलारीबापू, जो गुजरात उनकी साधना-स्थली रही। और ओशो रजनीश के साथ पढ़ते थे; एक महाविद्यालय में पढ़े थे। दोनों में बहुत बनती थी, जब रजनीशजी आचार्य थे। गुजरात में मही नदी के तट पर घूमा करते थे। बहुधा ये संत अंधेरे में बैठते थे।

मैंने दर्शन किये है। ये अंधेरे में बैठते थे, अंदर बहुत उजाला था। हम उजाला में बैठते हैं, अंदर अल्लाह जाने! मुझे ख़बर मिली थी कि रामदुलारीबापू यहां तळाजा में एक डो.चौहाण थे वो उनके फोलोअर थे, उनके घर बापू आये थे। तो मैं दर्शन करने गया तो एक कमरे में कोने में अंधेरे में बैठे थे, सिकुडकर बैठे थे। बड़े सुंदर मधुर थे। सुंदरता और मधुरता दोनों का संगम था। आदमी में केवल सुंदरता होती है तो ये कभी पतन का कारण बनती है। सुंदरता के साथ मधुरता भी जरूरी है।

हनुमानजी की 'सुंदरकांड' में माँ से मुलाकात हो गई। माँ ने आशीर्वाद दे दिया, फिर हनुमानजी कहते हैं, माँ मुझे भूख लगी है। क्यों? बोले, 'सुंदर फल रूखा।' ये फल सुंदर है। ये वाटिका रावण की है और रावण को तुलसी मोह कहते हैं। मोह की वाटिका सुंदर ही तो लगती है लेकिन मधुर नहीं है। इसलिए जानकीजी सुधारकर कहती है, हनुमंत, वत्स, तात, मधुर फल खाओ।

हमारा मार्गदर्शन करती है 'रामचरित मानस' की चौपाई। यदि जीवन मनाना है तो ये शास्त्र पर्याप्त है, आंतर् जगत को आलोकित यदि किसी साधक को करना है तो। मैं तुलना में नहीं जाता। कोई ओर ग्रंथ, सब ग्रंथ की अपनी-अपनी उंचाई है, लेकिन इतना सरल, इतना सहज और इतनी मधुरता से भरा हुआ शास्त्र जो हम जैसे सामान्य कोटिवालों को भी मधु पिला रहा है। 'रामचरित मानस' से बचा नहीं जा सकता और मैं बचने दूंगा भी नहीं! परसों तक लोगों को चिंता थी कि सेमी फाईनल है, कथा में कौन आयेगा? और कल कथा में तो वो ही का वो ही माहौल रहा है। भारत हारा नहीं, भारत भारत है! भारत हारा इसलिए औस्ट्रेलिया जीता है! मायूस मत होना। सात मेच तो तोड़ डाले ऐसी खेली है बच्चों! एक में थोड़ा इधर-उधर हो गया तो ये तो जिंदगी का खेल है। दुनिया तो ऐसी है, अच्छा खेले तो जयजयकार, न खेले तो कितने व्यंग, कितने कटाक्ष! कितने पूतले जलाये जा रहे हैं! हिन्दुस्तान को क्या हो गया है? पीच पर जाकर खड़े रहे तो पता लगे! गुजरातीमां पंक्ति छे-

आलोकना सागरमहीं कोई भावथी तरशो नहीं।
दुनियातणा दो रंगना धोखा कदी धरशो नहीं।

●

कुछ तो लोग कहेंगे, लोगों का काम है कहना,
छोड़ो बेकार की बातें, कहीं बीत ना जाये रैना...

प्रभुमिलन की, जीव-शिव के मिलन की मधुरजनी बीत ना जाय! जीव और शिव मिले।

मुझे प्रश्न पूछा जा रहा है कि 'बापू, कथा शुरू करते हैं तो चारों निगाहें घुमाकर आप देखते हैं और नजर बांध देते हैं?' नहीं, नहीं, मैं मेरे प्यारे श्रोताओं के दर्शन तो कर लूं, कौन कहां है? जितने को देख लूं। और कुछ नहीं है। मैं एक शे'र सुना दूं-

ये हसीन चेहरे मेरे तसबीह के दाने हैं।
निगाहें फेर लेता हूं, इबादत हो ही जाती है।

ये पड बांधने की बात नहीं है! सोये पड को जाग्रत करने की बात है। सोयी चेतना को प्रगट करने की बात है। 'मानस' से बचा नहीं जाता। मैं बहुत गरीबी में पला हुआ हूं लेकिन मैं किसीके आधीन नहीं हुआ। लेकिन 'मानस' ने मुझे पकड़ लिया! और मैं अकेला क्यों पकड़ में आउं? तुम कैसे बचोगे?

तो, केवल सुंदरता में मत फंसना, मधुर भी होना चाहिए। 'तात मधुर फल खाहु।' और जो सुंदरता हरि को अर्पण बन जाती है वो अपने आप मधुर हो जाती है। जो प्रसाद भगवान के चरणों में रख दिया जाय वो मधुर हो जाता है। मोह के फल तो सुंदर ही होते हैं। राग के फल तो सदा सुंदर ही होते हैं लेकिन पतन के कारण भी बनते हैं। रामदुलारी बापू सुंदर थे लेकिन बाबा मधुर भी थे। मैं दस मिनट बैठा। मुझे लगा, मैं महात्मा के एकांत को क्यों डिस्टर्ब करूं? बात हो गई!

नज़र से नज़र ने मुलाकात कर दी।
रहे दोनों खामोश और बात कर दी।

●

मैं तुझे देखुं तू मुझे देख,
देखते देखते हो जाय एक।

तो, रामदुलारी बापू, माधुपुर में उसकी समाधि है। द्वारिका में एक शिबिर कर रहे थे उसी समय की बात है। जिसके घर ठहरे थे उसके परिवार के किसी सदस्य ने रजनीशजी के ओटोग्राफ मांगे तो आचार्य रजनीशजी ने लिखा कि सत्य भीतर है, भीतर खोजो। और उसने अपनी जगप्रसिद्ध सही कर दी। और समयांतर में उसीके घर कुछ समय के बाद रामदुलारी बापू गये तो घर के वो ही सदस्य ने कहा कि बापू, आप मुझे ओटोग्राफ दो। तो बोले, पहले किसीके लिए है? तो बोले, आचार्य रजनीशजी के लिए थे। रामदुलारी बापू ने पढ़ा और लिखा, सत्य अंदर भी है, बाहर भी है। कहीं भी खोजो। ब्रह्मवेदांतजी माधुपुर में आश्रम लगाकर बैठे है, उसने मुझे सुनाया। फिर ये बात मेरे पास आई। अब ये तीनों की कोटि उपर है। मैं तो आप की कोटि में आता हूं। संयोगवश बात मेरे पास भी आई। कहे, आप कुछ कहो। तो मैंने लिखा, सत्य खोया है कहां कि खोजने की जरूरत है! कहां खोया है? सहजता ही तुम्हारा सत्य है। सत्य सहज होना चाहिए। प्रेम सहज होना चाहिए। करुणा सहज होनी चाहिए। करुणा के लिए कसरत नहीं करनी पड़ती। प्रेम के लिए प्राणायाम नहीं करना पड़ता। सत्य के लिए प्रयोग जरूरी नहीं। गोस्वामीजी 'उत्तरकांड' में एक पंक्ति लिखते हैं-

ईस्वर अंस जीव अबिनासी ।
चेतन अमल सहज सुखरासी ।।

ये सहज सुख की खदान है। ये सहज आप में मधुमास है। कायम ऋतुराज में रहता है, जो सहज होता है। हम सब के लिए तीस-तीस दिन में महिना बदलता है। बुद्धपुरुष के लिए मधुमास तीन सौ पैंसठ दिन रहता है, जनमोजनम रहता है। मिथिला से मधु मास कभी गया नहीं। तो सहजता ही सत्य है। आदमी सहज होना चाहिए। शास्त्र ने

भी कहा है, 'उत्तमा सहजावस्था।' उत्तम से उत्तम अवस्था विश्व में कोई है तो सहज अवस्था। फिर ध्यान-धारणा। ये मध्यम है। शास्त्र कहते हैं, इधर-उधर सत्य खोजना ये तो निकृष्ट से भी निकृष्ट है।

तो कुछ करने की ज्यादा जरूरत नहीं पड़ती। सत्य खोजने की आवश्यक्ता नहीं, सत्य खोजा नहीं जा सकता क्योंकि सत्य खो नहीं गया है। थोड़ा अनावरण करना पड़ता है। सत्य का मुख सोने से ढ़क गया है। स्वर्ण के पर्दे में सत्य छिप गया है। बुद्धपुरुष की ड्युटी इतनी ही है कि आवरण हटा दे। रामकथा हमारें में रही सहजता को उद्घाटित करने का विनम्र प्रमाणित प्रयास है। सहजता जैसी कोई साधना नहीं। सहज रहो, बाप! सहजता धर्म है।

'मधु' शब्द को हम ओर आलोकित करने के लिए रत है। मधु मानी अमृत, प्रकाश, शाश्वती जो भी अर्थ लगाना चाहो। हम जीव है। जो भी मिला है उसको अनावरण करने के लिए भी बुद्धपुरुष को थोड़ा प्रयत्न करना पड़ता है। और आश्रित को थोड़ा सहयोग करना पड़ता है। बच्चे का गंदा माँ निकालना चाहे तो बच्चे का सहयोग थोड़ा जरूरी है। वो पकड़कर बैठ जाय तो कपड़ा फट जाता है। उसको प्रयास मत समझो लेकिन थोड़ा-थोड़ा 'साथी हाथ बढ़ाना', ये जरूरी है। यहां मेरा बोलना है आप का सुनना है। यद्यपि हम एक कोटि में है। ये केवल व्यवस्था है फिर भी सुनने के लिए आप के कानों का सहयोग व्यासपीठ को आप को देना पड़ेगा।

तो बाप, गुरु देता नहीं, उद्घाटित करता है। शास्त्र हमें खोलता है। देख ले तेरी तिजोरी में ओलरेडी मुझ में जो लिखा है वो है। मैं मेरे पन्ने खोलके तेरा आवरण खोलता हूं। और तूने तुम्हारी संपदा दिखाई दे। इस सत्य को नकारा नहीं जा सकता। फिर भी मैंने कहा कि थोड़ा सहयोग, सहज सहयोग आवश्यक है।

तो मधु मिले कैसे? माना कि हमारे में है। तो वो कैसे हमें प्राप्त हो? कोई बुद्धपुरुष मिले तो खोल दे; तो वो बुद्धपुरुष कैसे मिले ये प्रश्न उठेगा। मेरी समझ में 'मानस' की कृपा से मुझे तीन बस्तु समझ में आ रही। मैं आप के साथ शेर करना चाहता हूं। अमृत ओलरेडी है। मिले कैसे? क्या रास्ता है उसको पाने का? एक, सागरमंथन किया जाय। हमारी पौराणिक कथा है कि देव और दानवों ने मिलकर सागरमंथन किया और अमृत निकाला। लेकिन अमृत निकाला इसके साथ खतरा भी है ज़हर का। दूसरा बटवारे का। ये मधु जरा विवादास्पद है। यद्यपि श्रमसाध्य है। पहले इसके पीछे पौराणिक प्रसंग सुन लो। फिर ये बात सरल हो जायेगी। बार-बार देवता दानवों से पराजित होते रहे। आसुरी तत्त्व सदैव सुरीतत्त्व को पराजित करता रहता है। ये करीब-करीब नियम-सा है। अतिशय बोलनेवाला सम्यक् बोलनेवालों को चुप कर देता है। अतिशय तार्किक सद्बुद्धिवालों को चुप कर देता है।

शास्त्र का एक बहुत प्यारा सूत्र मैं आप के सामने रखना चाहता हूं। 'बुद्धिः फलं अनाग्रहम्।' इससे ज्यादा सरल सूत्र कोई हो ही नहीं सकता। हमारे देश का मनीषी, हमारे देश का ऋषि बड़ा प्यारा सूत्रपात करता है। उसने कहा, बुद्धि का फल क्या? अनाग्रहम्। जिद्द ना करना। विवेक का फल क्या? छोड़ो बहस। विवेक कभी आग्रह नहीं करता। कृष्ण का विवेक अर्जुन से कहता है, मैंने तेरे सामने सातसौ श्लोक बोल दिये। अब 'यथेच्छसि तथा कुरु।' अब मेरा कोई आग्रह नहीं। अब तू जो चाहे करो। भरत की सुमति, भरत का विवेक देखो! भरत हंस है, विवेकबुद्धि का दाता है। संपदा उसके पास है। वो कहते हैं-

जेहि बिधि प्रभु प्रसन्न मन होई।
करुना सागर कीजिअ सोई।।

जगद्गुरु शंकराचार्य परमहंस है। वो कहते हैं, 'यथा योग्यम् तथा कुरु।' जो आदमी तुम्हारे साथ अकारण बहस में बहुत उतरे, समझना इसमें बुद्धि नहीं है! क्योंकि बुद्धि है तो उसका फल होना चाहिए। बुद्धि मानी विवेक। एक गज़ल है-

तुम जिद्द तो कर रहे हो, हम क्या तुम्हें सुनाये?
नग्में जो खो गये हो, उसे कैसे गुनगुनाये?
नजदीक आते-आते हम दूर हो गये हैं,
इन वादियों से कह दो हम को न भूल जाये।

जो अकारण तुम्हारे साथ बहस करते हैं, समझो बुद्धिहीन है! अब उसका उपाय क्या? तो तुलसीदासजी को पूछो-

बुद्धि हीन तनु जानिके सुमिरौ पवन-कुमार।
बल बुद्धि बिद्या देहु मोहिं हरहु कलेश बिकार।।

'बुद्धिः फलं अनाग्रहम्।' हिंदुस्तान के ऋषि परंपरा ने जो वरदान दिया है विश्व को वो कोई नहीं दे सकता। सितार टूट जायेगा; लाठी के साथ लड़ेगा नहीं। सितार तो निमंत्रित करता है, जिस हाथ में लाठी ली है, लाठी छोड़कर थोड़ी ऊंगलियां मेरे तार पर घुमाइ होती तो मैं तुम्हें राग देता। मैं तुझे सूर की मस्ती में डुबो देता। इसलिए ज्यादा बोलनेवाला सम्यक् बोलनेवाले पर हावी हो जाता है। विश्व के युवा जगत ये याद रखे कि 'बुद्धिः फलं अनाग्रहम्।' छोड़ो जिद्द।

बाप, तो दानव और देव की लड़ाई में देवताओं को सदैव मार खानी पड़ती थी। आसुरी तत्त्व सदैव सुरी तत्त्वों पर हावी रहा। तो देवता थके। पितामह ब्रह्मा के पास गये कि कोई उपाय बताओ। ब्रह्मा ने कहा कि अमृत तुम पी लो तो अमृत्व के कारण थोड़ी मारपीट होगी पर मरोगे नहीं, विजयी होगे। तो बोले, मधु कहां मिले? तो कहा कि सागर में मधु है, तो समुद्र मंथन करो। सागर को हमारे ऋषिओं ने रत्नाकर कहा है। मंथन करो। दहीं को मथना पड़ता है। उनमें नवनीत छिपा है, घी छिपा है। ज्योत जल सकती है लेकिन चाहिए मंथन। तो सागर को मथा कैसे जाय? मथानी चाहिए। इतने बड़े समंदर की मथानी कौन बने? तब ब्रह्मा ने कहा कि मंदराचल की मथानी बनाओ। हमारे शब्दकोशों में और हकीकत में हमारे अनुभव में भी एक नाम है पर्वत का अचल। अचल को पर्वत कहते हैं। हिमाचल, विंध्याचल, मंदराचल। कथा को हमने गौर से देखा नहीं या तो गुरुमुख से सुना नहीं। देखो, मथानी घूमनी चाहिए, घूमनेवालों को हम अचल कैसे कहे? अब मैं आप के सामने प्रश्न रखूं कि विचार स्थिर होना चाहिए कि अस्थिर? कहते हैं, हमारे विचार कभी बदलते नहीं। ये जड़ता है, दृढ़ता नहीं। अचल भी घूमना चाहिए। विचार किसी की परिक्रमा करे। जड़ता का और दृढ़ता का जो भेद समझेगा और विचार की बाबत का ये मनोविज्ञान समझेगा। स्थितिस्थापक होने चाहिए। इसलिए अचल को घुमाया गया। भरोसा जड़ नहीं होना चाहिए, दृढ़ होना चाहिए। समयानुकूल विचार में परिवर्तन आना चाहिए। जब तक साधक जड़ता और दृढ़ता का भेद नहीं समझेगा ये विचार विज्ञान समझ में नहीं आता। यद्यपि परमात्मा विचार से पर है। फिर भी साधक को परमात्मा ने बुद्धि दी है तो थोड़ा विचार करना चाहिए। बुद्धि की जगह है, बस आग्रहमुक्त बुद्धि होनी चाहिए। अनाग्रही बुद्धि होनी चाहिए।

मैं एक ओर प्रश्न पूछूं? भूख लगे वो अच्छा कि भूख ना लगे वो अच्छा? आप ये कभी भगवान से कहोगे कि हमें भूख ही न लगे? आयुर्वेद को पूछो, भूख ही न लगे ये भी एक रोग है, जिसको मंदाग्नि कहते हैं। और मंदाग्नि रोग है। मेरा बचपन किसीके प्रभाव से नहीं गया, सतत अभाव में गया। लेकिन 'मानस' ने मुझे पकड़ लिया। शस्त्र ही नहीं मारते, शास्त्र भी मार देते हैं! भूख लगनी चाहिए। रोग की समाप्ति हो जाय तो उसका पहला प्रमाण ये है कि उसको भूख लगने लगे। गोस्वामीजी लिखते हैं-

सुमति छुधा बाढ़इ नित नई।
बिषय आस दुर्बलता गई।।

सद्बुद्धि की भूख लगे। विचारों की भूख साधक को लगनी चाहिए और गुरु का दिया विचार उसका दृढ़ होना चाहिए। विचार मथानी है। मंदराचल घूमना चाहिए। बारि मथने से घृत नहीं मिलता।

बारि मथें घृत होइ बरु सिता ते बरु तेल ।
बिनु हरि भजन ज भव तरिअ यह सिद्धांत अपेल ।।

रेती को पीसने से तेल नहीं निकलेगा। मानो निकल जाय, असंभव शायद संभव हो जाय तो भी हरिनाम के बिना तुम्हारा कलेश नहीं मिटेगा।

आखर मधुर मनोहर दोऊ ।

राम और नाम मधुर मधुर। ये मधु है। ये अर्क है, ये अमृत है। ये शाश्वत है। यही तो मधुमास है। मंदराचल की घुमानी करे तो वो तो अंदर बैठता जायेगा, तब क्या? तब प्रभु ने कहा कि कूर्मावतार लेकर मैं नीचे बैठ जाउंगा। विचार की भूमिका ईश्वर होना चाहिए। मेरे और आप के विचारों का अध:पतन तब होता है जब उसके नीव में हरि विश्वास नहीं। ये रूपक भी है, सही भी है; ऐतिहासिक भी है और आध्यात्मिक भी है। ईश्वरआधार विचारों की भूमिका होनी चाहिए। फिर प्रश्न आया कि दहीं हो तो मथानी आधार अब रज्जु भी चाहिए। इतनी बड़ी रस्सी चाहिए तो भगवान ने कहा, वासुकि नाग की रस्सी बनाओ। अब सांप की एक छोर पे मुख और एक छोर पे पूंछ। एक छोर असुर पकड़े, एक देवताओं तुम पकड़ो और दोनों मिलकर मथो। तुम लोग मुखवाला भाग पकड़ना। अब तैयारी हो गई। जब देवताओं ने मुखवाला भाग पकड़ा तो असुर चिल्लाये, आप मुख पकड़ो और हम पूंछ? मुख पर हम रहेंगे। देवताओं ने दे दिया। अब सांप को मुख से पकड़कर घुमाये तो विष ही निकलेगा! इसलिए मुख पृष्ठ बनने से अंतिम पृष्ठ बनना अच्छा। वासुकि नाग, मंदराचल, ये सब मंथन रूपक है, आध्यात्मिक सत्य है कि कथानक भी सत्य है, यह कहना मुश्किल है। ये वासुकि नाग की रस्सी बनाई। ये सर्प क्या है?

> हमारा मार्गदर्शन करती है 'रामचरित मानस' की चौपाई। यदि जीवन मनाना है, आंतर् जगत को आलोकित यदि किसी साधक को करना है, तो ये शास्त्र पर्याप्त है। मैं तुलना में नहीं जाता। कोई ओर ग्रंथ हो; सब ग्रंथ की अपनी-अपनी उंचाई है, लेकिन इतना सरल, इतना सहज और इतनी मधुरता से भरा हुआ शास्त्र कहां है, जो हम जैसे सामान्य कोटिवालों को भी मधु पिला रहा है। 'रामचरित मानस' से बचा नहीं जा सकता और मैं बचने ढूंगा भी नहीं! 'मानस' से बचा नहीं जाता। मैं बहुत गरीबी में पला हुआ हूं लेकिन मैं किसीके आधीन नहीं हुआ। लेकिन 'मानस' ने मुझे पकड़ लिया! और मैं अकेला क्यों पकड़ में आउं? तुम कैसे बचोगे?

संशय सर्प ग्रसेउ मोहि ताता ।
दुखद लहरि कुतर्क बहु ब्राता ।।

वहेम, संदेह ये सर्प है। इसकी जरूरत है जिज्ञासा के रूप में। मुख मत पकड़ो। बुद्धि में प्रश्न उठना चाहिए। जिज्ञासा होनी चाहिए। नया जानने की भूख होनी चाहिए। 'अथातो ब्रह्मजिज्ञासा।' संशय की पूंछ पकड़ो, मुख पकड़कर नहीं। तो बाप, प्रश्न पूछो, खुल के पूछो। गुरु के मुख को बंद करने के लिए मुख पकड़ करके नहीं, पूंछ-चरण पकड़कर पूछो। पूंछ पकड़ना, शरणागति से संशय करना। मुख पकड़ना, अपने अहंकार के साथ प्रश्न करना।

तो, रामनाम मधुर है, उसको पाने की एक प्रक्रिया है मंथन। इससे निकलता है अमृत-मधु।

ब्रह्म पयोनिधि मंदर ग्यान संत सुर आहिं ।
कथा सुधा मथि काढ़हिं भगति मधुरता जाहिं ।।

ब्रह्म समंदर है। ज्ञान मंदराचल है। संत देवता है। फिर उन लोगों ने ब्रह्म के समुद्र को मथा, विवेक से मथा; आग्रहमुक्त चित्त से मथा सुरी विचारवालों ने। इससे कथासुधा, कथारूपी अमृत निकला, मध निकला फिर 'भगति मधुरता जाहिं।' जिसमें भक्ति का माधुर्य था। जिससे भक्ति प्राप्त होती है, ये तीसरा मंथन 'मानस' का।

प्रेम अमिअ मंदरु बिरहु भरतु पयोधि गँभीर ।

प्रेम अमृत है। राम और भरत का चौदह साल का वियोग ही मंदराचल है। समुद्र कौन? भरत है समुद्र। प्रेमरूपी अमृत निकालने के लिए भरतरूपी समंदर में चौदह बरस के विरहरूपी मंदराचल को घुमाकर कौन मथे?

मथि प्रगटेउ सुर साधु हित कृपासिंधु रघुबीर ।

परमात्मा ने स्वयं मथा भरत को और हमारे लिए प्रेम का मधु निकाला। तो मधुप्राप्ति का एक उपाय है मंथन।

संगीतज्ञ शोभाजी हमारे आदरणीय प्रधानमंत्री सा'ब के पैर छूने गई तो हट गये, 'आप मेरे पैर नहीं छू सकते! आप का पद मेरे से ऊंचा है।' और है। संगीत का पद सियासत से ऊंचा होना चाहिए। व्यासपीठ का पद राजपीठ से ऊंचा है, रहेगा अनंत कोटि। लेकिन ये अदब-विनय मुझे अच्छा लगा। धन्य हो गुजरात धरणी! अच्छा लगे वो तो मैं सराहूंगा। जीवन में विनय, सादगी जरूरी है।

तो बाप, मधु प्राप्त करने का एक तरीका है मंथन। मथानी कम से कम दहीं में रहनी चाहिए, पानी में चली गई तो नवनीत नहीं मिलता। घूमती रहे, लेकिन जल में ना हो, दहीं में रहे। एक तरीका है। कहीं हम अमृत मांगे। उपनिषद के ऋषिओं ने मांगा कि तू हमारे लिए ये कर।

असतो मा सद्गमय:।
तमसो मा ज्योतिर्गमय:।

हमें सत्य की ओर ले चल। हमें प्रकाश की ओर ले चल और मृत्यु से हमें अमृत की ओर ले चल; ये मांग है। याचना, भिक्षा; दूसरा उपाय है हम भिक्षाभाव से मांगे। और भीखु होना समृद्धि है। बुद्ध के भीखु देखिये, वो मांगने जाते थे लेकिन अपनी महिमा कहीं गिरने नहीं देते थे। भीखु मानी मांगन नहीं, पूरा भाव बदल जाता है। यदि कोई बुद्धपुरुष खाना खाये ना कभी सामने से मांगकर तो समझना, तुम्हारी इकहतर पीढ़ी के पाप खा जायेगा। ये बुद्धता की निशानी है। इसलिए हमने अतिथि को देव माना है। भीखु दूसरा विश्वनाथ महादेव है। जब नितांत आवश्यकता हो तब जरूर मिलेगा।

लता बिटप मागें मधु चवहीं ।

रामराज्य स्थापित हुआ तो लता और वृक्ष जितना मधु चाहो इतना देते थे।

मनभावतो धेनु पय स्रवहीं ।

गायें मनभावन दूध देती थी। जितना चाहो, पात्र भर देती थी। लता कौन? भक्ति। बिटप कौन? ज्ञान; ब्रह्म।

लता ओट सब सखिन्ह लखाए ।

एक सखी कहती है, 'जानकी, देख ये लता की ओट में सांवरा कुंवर है ये राम है।' वहां मेरा ठाकुर लता की ओट में है। उसके बाद लता भवन से प्रगट होते हैं।

सुतीक्ष्ण नर्तन कर रहा है, 'अरण्यकांड।' ठाकोरजी पेड़ के पीछे से उसका दर्शन कर रहे हैं। तीसरा बाली- सुग्रीव युद्ध। सुग्रीव-वाली के बीच लड़ाई चल रही है और भगवान वृक्ष की आड़ में से देखते हैं। वाली देखता है। सब ये आदमी देखा लेकिन अनदेखा कर गया। सत्य सामने हो कि छिपा हुआ हो; तुम्हारी आंख पकड़ने के काबिल हो तब मोमेन्ट पकड़ो। भक्ति के पास, ज्ञान के पास जाये और हाथ फैलायेगा तो वो उसको मधु प्रदान करेगा। और तीसरा उपाय है न मांगना, न पुरुषार्थ करना, न मंथन करना। सहज किसीके कदमों में पड़े रहना। और दाता हमें मधु से भर दे।

यह गुन साधन ते नहिं होई ।

मांगने आउं तो पात्र का अभाव है। तो बाप, तीसरी विद्या जो है वो कृपा। लता है प्रेम। वृक्ष यानी ज्ञान है सत्य और नि:साधन को मधु देना ये है करुणा। यही है व्यासपीठ के सूत्र-सत्य, प्रेम, करुणा। आज की कथा यहां विराम।

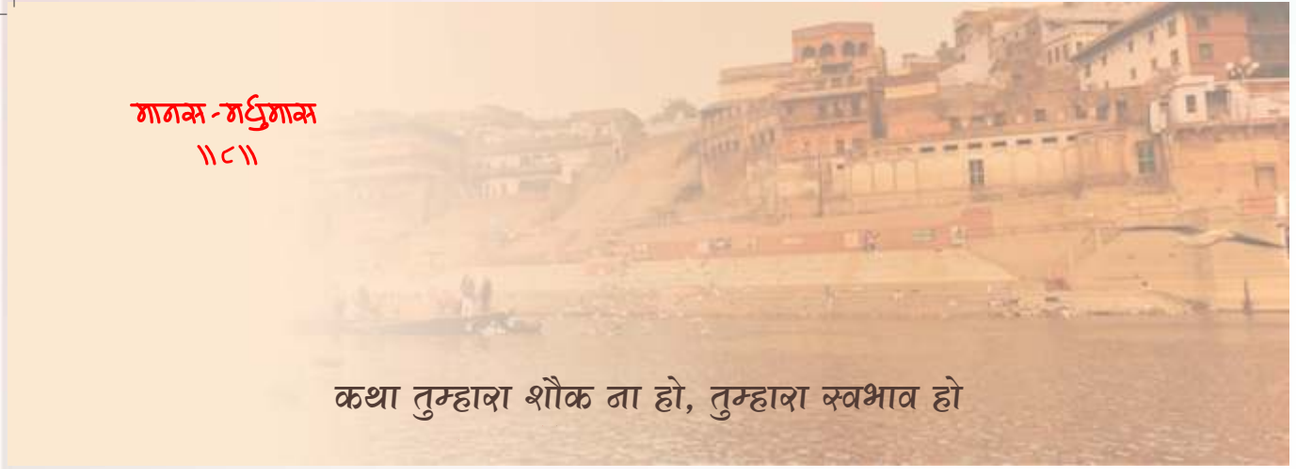

कथा तुम्हारा शौक ना हो, तुम्हारा स्वभाव हो

आज के दिन तीन बातों की बधाई मेरी व्यासपीठ आप सब को देना चाहती है। इनमें सब से पहली बधाई तो ये है कि हम रामकथा के गायकों के लिए और रामतत्त्व जो परमतत्त्व है उसके नाम, उसके रूप, उसकी लीला, उसके धाम का स्मरण करनेवालों के लिए आज के दिन से बढ़िया दिन विश्व में कौन हो सकता है? ये मधुनवमी है, रामनवमी है और ये दिन विश्वनाथ की नगरी में गंगा के तट पर जहां त्रिभुवन पावनी गंगा शंकर के मुख से बहती है ऐसे परम पावन अवसर पर ये कथा का गायन हो रहा है तब सब से पहली जिससे ज्यादा और कोई प्रसन्नता नहीं हो सकती वो रामनवमी की; और भगवान राम तो त्रेता में, वो मधुयुग में, वो मधुमास में, वो मधुपक्ष में, वो मधु नक्षत्र में, वो मधु तीथि में, वो मधु बार में और वो मध्याह्न की मधु बेला में प्रगट हुए उसकी प्रसन्नता तो है ही, लेकिन आज के दिन सोलहसौ इकतीस रामनवमी के दिन अवध में 'श्री रामचरित मानस' का भी प्रकाशन हुआ। तो आज 'मानस' की भी जन्म जयंती है इसलिए मेरे लिए बहुत विशेष प्रसन्नता है। आप सब को और त्रिभुवन को आज रामनवमी की बधाई हो, बधाई हो, बधाई हो। और आज के पावन दिन पर 'वाल्मीकि रामायण' अथवा तो शतकोटि ये रामरस है उस पर जिन्होंने गाकर, लिखकर, संशोधन करके, अपना मौलिक चिंतन-मंथन करके, गायन करके, वक्तव्य देकर, गद्य-पद्य में रचना करके अनादि काल से भगवान महादेव से लेकर आज तक जिन-जिन महापुरुषों ने इस 'रामचरित मानस' पर या तो 'रामायण' पर काम किया है ये तमाम विभूतिओं को भी आज व्यासपीठ से मैं प्रणाम करता हूं।

दूसरी बधाई हमारे देश ने हमारे देश की ये मौजूदा सरकार ने राजनीति के बड़े राजर्षि आदरणीय अटलबिहारी बाजपेईजी को 'भारत-रत्न' समर्पित करके उसकी वंदना की इसके लिए देश को बधाई। और परसों तीस तारीख को एक ऐसी ब्रह्मलीन विभूति ब्रह्मलीन आदरणीय मदन मोहन मालवियाजी ने देश की सुदृढ़ता रखने के लिए बहुत काम किया उसको ये देश और मौजूदा सरकार 'भारत-रत्न' की पदवी देकर वंदना करने जा रही है उसकी बधाई हो। तीसरी बधाई समग्र काशी नगर के सेवाप्रिय समाज ने तनुजा, वित्तजा, मानसी जिस प्रकार से सेवा की हो छोटे-बड़े सब और जिसमें गुजरात का बहुत बड़ा योगदान है, आप सबने जल-थल शबवाहिनी काशी को उपलब्ध कराई और जिसका लोकार्पण अभी नौ बजे हुआ। जनता की सेवा में समर्पित की गई। इस मंगल कार्य के लिए बधाई।

एक बात आप को कहनी है। असी घाट पे कार्यक्रम हुआ और असी घाट मेरे तुलसी का घाट है; जहां गोस्वामीजी ने 'राम-राम' कहते अपनी अंतिम सांस छोड़ी। इसलिए असी घाट से जो गंगा बह रही है वहां लोकार्पण हुआ।, हर क्षेत्र के अग्रणी महानुभाव और स्वयं आदरणीय प्रधानमंत्री सा'ब ने अपने आप को जोड़ दिया है। मेरा मनोरथ है कि उत्तराखंड में भारी हादसा हुआ तब अमरिका की भूमि पर एक विचार प्रगट किया था; लोगों की

व्यासपीठ के प्रति अपार श्रद्धा के कारण बहुत बड़ी राशि इकठ्ठी हुई थी। हमने सोचा, लाभार्थी को आमने-सामने प्रसाद बांट दे; तो थोड़ा समय लग गया। बीच में कश्मीर में तकलीफ़ आई तो इसमें से एक करोड़ की राशि हमने कश्मीर सहाय में दे दी थी। बाकी की राशि केदारनाथ जाके वहां सब को इकठ्ठे करके गांव-गांव से लाभार्थी को खोज की वहां सब करीब नौ-दस करोड़ की राशि थी वो सब दे दी। उसके बाद भी थोड़े पैसे बचे हैं। मेरी इच्छा हो रही है कि असी घाट पर ये हो रहा है, ग्यारह लाख रुपया व्यासपीठ और हनुमंत प्रसादी के रूप में यहां गंगा के लिए जो भी काम यहां हो रहा है, उसमें समर्पित करना चाहते हैं। काशीवासी हमारी पुष्प-पंखुड़ी कुबूल करे। ये उद्घोषणा नहीं, आंतर् प्रार्थना है। आज मध्याह्न का दिन विश्व के लिए सगुन भरा दिन है।

हम 'मानस-मधुमास' को केन्द्र में रखते हुए गुरुकृपा से कुछ ग्रंथ अवलोकन से अंत:करण की प्रवृत्ति से आप के साथ संवादी चर्चा कर रहे हैं।

बिप्र धेनु सुर संत हित लीन्ह मनुज अवतार ।
निज इच्छा निर्मित तनु माया गुन गो पार ।।

विप्र के लिए, गायों के लिए, देवताओं के लिए और संतों के लिए प्रभु ने मनुष्य अवतार धारण किया। ब्राह्मण, गाय, देव और संत। समग्र समाज के प्रतिनिधि के रूप में नाम लिखे गये। विप्र का अर्थ छोटा-सा न किया जाय। गाय का अर्थ भी पशु-जगत में छोटा न किया जाय। देवता लोक यद्यपि स्वार्थी माने गये हैं! तुलसी ने तो 'सुरस्वार्थी' कहकर बहुत डांटा है! लेकिन उसका भी हम संकीर्ण अर्थ ना करें। और संत का तो संकीर्ण अर्थ करना ही नहीं चाहिए। ये चार जो नाम दिये हैं आज के राम के प्रागट्य पर उस पर थोड़ा विचार होना आवश्यक है। ब्राह्मणों के लिए परमात्मा अवतरित होते हैं। यहां ब्राह्मण का केवल वर्ण वाचक अर्थ न किया जाय। ब्राह्मण का शरीर शूद्र कामनाओं के लिए नहीं होता। ब्राह्मण को मस्तक माना गया है और जो मस्तक शूद्र कामना का विचार करे तो वो ब्राह्मण ब्राह्मण नहीं रहता। यहां ब्राह्मण मानी समग्र जाति के जलचर, नभचर सब के कल्याण के लिए जिसके मस्तक में चिंतन चलता हो ऐसे ब्राह्मण की बात है। बिगड़े दिमाग की बात नहीं है। यहां वर्ण की बात नहीं है। वैश्विक व्यवस्था, वैश्विक चिंतन केन्द्र में है। लेकिन ब्राह्मण हो, गाय हो, देव हो सब को कुछ ना कुछ महत्त्वाकांक्षा होती है।

कोई अपना, कोई पराया ऐसी गणना तो शूद्र हृदय का विचार है। यहां कोई विभाजन नहीं है। यहां कबीर सा'ब ब्राह्मणों के भी ब्राह्मण है। कभी तुलसी, कभी कबीर, कभी नानक ये सब महापुरुषों ने बहुत बड़ी मशाल जलाई कि उजाला कोई एक वर्ग का न रहे; उजाला कोई एक वर्ण का न रहे। प्रकाश पक्षपाती ना बने। न प्रकाश हिंदु हो, न प्रकाश मुस्लिम हो, न बौद्ध हो, न जैन हो। प्रकाश ज्ञानस्वरूप है। प्रकाश प्रकाश है। जब चारों ओर वातावरण ऐसा हो गया हो तब कोई ऐसा आदमी देश में आता है जो बचाये रखता है। कभी मधुसूदन सरस्वती महाराज, कभी जगद्गुरु शंकराचार्य, कभी कोई, कभी कोई। अंधश्रद्धा कर्मकांड की जाल है! कर्मकांड होना चाहिए लेकिन स्नेहयुक्त। कबीर साहब ऐसी सभी बातों से एक बहुत बड़ा ब्राह्मणकर्म करने के लिए उपर उठे कि जहां शूद्र कामना बिलकुल ना हो। ढ़ाई अक्षर प्रेम का शब्द दिया विश्व में। ये ब्राह्मणत्व है। तो-

चारों ओर सरफीरी हवा चलती थी।
मैं आख़िरी चिराग था इसलिए जलना पड़ा मुझे।

पहले के सभी चिराग बुझ चुके! कोई धर्म के नाम पर, सब चिराग का प्रकाश किसी ना किसी महत्त्वकांक्षाओं ने बुझा दिये थे ये कबीर को कितना लागू होता है शे'र! कबीर को लगा होगा कि मैं आख़िरी चिराग था इसलिए जलना पड़ा मुझे, जलना चाहिए। किसीको तो ये काम करना पड़ेगा।

यहां गोस्वामीजी 'विप्र' शब्द प्रयुक्त करते हैं। यहां वेद की प्रधानता है ऐसा एक समाज, ऐसी एक विचारसरणी, विचार की एक प्रधानता है जिसमें सुमति की जिसको भूख है, ऐसे एक तपस्वी वर्ग की ओर संकेत

है जो विश्व के लिए जीते थे। अथवा तो विप्र का अर्थ ये भी कर सकते हैं कि जिसमें प्रपंच नहीं है ऐसा एक चिंतन-मननशील। और ऐसी विचारवानों की महत्त्वाकांक्षा होती है, लोभ होता है। विप्र को किसी बात का लोभ होता है कि शास्त्र बचे रहे। शास्त्र चिंतन रहे। शास्त्र का क्षय ना हो। वैश्विक विचारधारा जिन सद्ग्रंथों ने दी हो वो अक्षुण्ण रहे। और उसमें यदि कुछ ऐसी बात है तो उसका समय-समय पर संशोधन हो। 'भागवत' में क्या लिखा है, 'वेद शास्त्र विशुद्धिकृत।' भगवान की कथा का गायक-चिंतक ऐसा होना चाहिए जो वेद-शास्त्र का समयोचित शुद्धिकरण करे।

तो, अच्छा काम कितने महापुरुष कर रहे हैं! सब को अपना राम है। सब को अपना गोविंद है। सब को अपना हनुमान होता है। सब को अपनी राधा होती है। सब की अपनी एक महत्त्वाकांक्षा होती है कि शास्त्र का चिंतन करे और आगे बढ़े। मूल को पकड़ करके नये-नये फूल खिलायें जाय। मूल अक्षुण्ण रहे। राम मूल है, उसको नहीं बदला जाता। उस पर नया फूल खिलना चाहिए। फूल खिलना बंद हो जाय तो समझना, मूल का निमूर्लन हो चुका है! भगवान की रामकथा ये गंगा है। कई घाट को छूती है। इसलिए शंकर कथा कहते हैं तब ये बोले-

पूँछेहु रघुपति कथा प्रसंगा ।
सकल लोक जग पावनि गंगा ।।

प्रेममारग में, भक्तिमारग में जिसको बहुत महत्त्वाकांक्षा होती है उसको बहुत निकट मत रखना; प्रमाणित डिस्टन्स बनाये रखना। वर्ना निकटवाला तुम्हारे पद पर आंखें पसारे बैठा है कि कब ये हटे, मैं बैठ जाउं! इसलिए सभी बुद्धपुरुष को कोई निकट नहीं होता, कोई दूर नहीं होता। सब से निकट शिष्य था ईसु का जुडास। जिसस को पता था, कभी ये आदमी मुझे बेच देगा! और इतिहास साक्षी है कि अपने गुरु को जुडास ने तीस चांदी के सिक्के में बेच दिया है! इसलिए मैं बार-बार मज़बूरसा'ब का शे'र कहता हूं-

ना कोई गुरु, ना कोई चेला।
मेले में अकेला, अकेले में मेला।

और ये तो शंकराचार्य का विचार मज़बूर ने उठाया!

न मृत्युर्नशंका न मे जातिभेदः
पितानैव मे नैव माता च जन्म ।
न बंधुर्नमित्रं गुरुर्नैव शिष्यः
चिदानंदरूपः शिवोऽहम् शिवोऽहम् ।।

तीस सिक्के में जिसस को पकड़वा दिया! गुजराती में एक गज़ल है, नाझिर देखैया की-

पथिक तुं चेतजे पथना सहारा पण दगो देशे।
धरीने रूप मंज़िलनुं उतारा पण दगो देशे।

यह शरीर जो हमारा उतारा है, वो भी दगा देगा!

मने मजबूर ना करशो, नहीं विश्वास हुं लावुं,
अमाराना अनुभव छे, तमारा पण दगो देशे।

महत्त्वाकांक्षा दगा दिये बिना नहीं रह सकती। महत्त्वाकांक्षी का अपना एक लक्षण है धोखा देना। महत्त्वाकांक्षी आदमी सदा भूखा होता है और भूखे के पास बैठना मत, कब खा जाय पता नहीं!

तीन प्रकार की एषणा होती है विश्व में, जिसको हम तृष्णा कहते हैं। सुतेषणा, लोकेषणा और वित्तेषणा। पैसों की, पुत्र की और कीर्ति-प्रतिष्ठा की एषणा। ये महत्त्वाकांक्षा सब को होती है। तो, जो शास्त्र द्वारा विश्वमंगल करना चाहते हैं उसको स्वाभाविक है शास्त्र का लोभ बना रहता है। अच्छी महत्त्वाकांक्षा है लेकिन है बंधन। आख़िर बंधन है, सोने का हो चाहे लोहे का हो।

विप्र है, धेनु-गाय। गाय के लिए परमात्मा प्रगट हुए तो गाय का मतलब है, गो मानी एक पशु नहीं, इस देश में गाय की महिमा है। मैं संपन्न लोगों को कहूं कि अपने घर गाय रखे और अपने घर न रख सके तो जहां गो सदन हो वहां गाय दत्तक ले। संतों से सुना है, गाय हमारे यहां अर्थ का प्रतीक मानी गई। गाय पर भारत का अर्थतंत्र चलता था। पौराणिक कथा से आप परिचित है कि गाय के अंग में सब देव-देवताओं का वास है, ऐसा हम श्रद्धा से मानते हैं। कहते हैं, सब देवी-देवता गाय के शरीर में स्थान लेने लगे तो लक्ष्मीजी देर से आई। तो बाप, यहां गाय के सभी अंग वो हो गये थे; कोई देव यहां, कोई देवी यहां, सब गाय के अंग में निवास कर गये थे। लक्ष्मीजी ने कहा, मुझे भी जगह दो। गाय से प्रार्थना करती है कि मुझे रहने की जगह दो। तो गौमाता ने कहा कि अब तो कोई जगह खाली नहीं! मेरी खुरी से लेकर सिंग तक सब बिलग-बिलग देव-देवीओं ने जगह ले ली! मैं परिपूरित हो गई। और लक्ष्मीजी गिड़गिड़ा रही है कि मुझे कोई जगह दो, मुझे आप के शरीर में निवास करना है। ऐसा प्रतिष्ठा का पात्र मानी गई गौ हमारे देश में। तब गाय ने कहा, देवीजी, हमारे यहां कुछ खाली नहीं है; हमारा गोबर खाली है, यदि आप मेरे गोबर में वास करना चाहे। लक्ष्मी ने कहा, कहीं भी रखो। और गोबर में लक्ष्मी का वास माना गया। और गोबर से हमारी पुरानी खेती हुआ करती थी। गाय के वंश से खेती होती है। इससे आदमी पैसा कमाता है। इसलिए गाय अर्थ का प्रतीक मानी गई।

राम अवतार रामनवमी के दिन हुआ गाय के लिए। पूरे जगत के अर्थ को सार्थक करने के लिए ठाकुर प्रगटे। लेकिन अर्थवालों को भी महत्त्वाकांक्षा तो होती है। तुलसी ने लिखा है अर्थ के बारे में कि जितना लाभ होता है उतना लोभ बढ़ता है।

सज्जन आदमी को अर्थ की महत्त्वाकांक्षा ऐसी होनी चाहिए कि मेरा अर्थ सार्थक हो। और अर्थ को सार्थक करने के लिए दसवां हिस्सा निकाल दो प्रामाणिकता से। किसीके भोजन के लिए, कपड़े के लिए, स्कूल की फी के लिए। सौ रुपया कमानेवाला दस रुपया बिलग करे। सरकार का काम कम हो जायेगा और हम रामराज्य की ओर गति कर सके। ईमानदारी से निकालना चाहिए। ये दशांश पद्धति है। हम कोई अनुष्ठान करते हैं तो दसवें भाग के मंत्र को अग्नि में आहुत कर देते हैं, जिसको हमारी भारतीय परंपरा दशांश कहती है। अर्थ सार्थक हो। अर्थ की महत्त्वकांक्षा बुरी नहीं। हमारे ग्रंथों में कहा है, दो हाथ से कमाओ, लेकिन चार हाथों से बांटो।

विप्र, धेनु, सुर, देवताओं के लिए भी परमात्मा रामनवमी के दिन प्रगट हुए। देव स्वार्थी है। रामजन्म हुआ तो जयजयकार करने में पहले सब से पहले देवता कुद पड़े! रामजनम से ज्यादा खुशी ये है कि रावण मरेगा और रावण मरेगा तो हमारा भोग सलामत रहेगा। स्वार्थी लोग है! नजर में आना चाहिए हमनें बहुत सेवा की ये देववृत्ति है। स्तुति में फूलवृष्टि में सब में देवता पहले बैठे हैं रामजनम के प्रकरण में! सब आगे! मैं समारंभों में भी देखता हूं, कोई बड़ा समारंभ होता है, तो जिसको केमरे में आना है, सब आगे आ जाते हैं! व्यवस्था के नाम पर

आगे आ जाता हैं! मेरी तसवीर आ जाय! जीव का स्वभाव है।

कल का निवेदन फिर से करूं, कथा तुम्हारा शौक ना हो, तुम्हारा स्वभाव हो। कथा मेरा शौक ना हो, कथा मेरी प्रकृति हो, मेरा स्वभाव रहे। ये महत्त्वाकांक्षा होती है। धनुषभंग के समय तुलसी ने एक चौपाई लिखी, वहां देवता केमरे में पकड़े गये!

भए शोक बिशोक कोक मुनि देवा ।
बरिसहिं सुमन जनावहिं सेवा ।।

फूल बरसते हैं क्यों? देखो, हमनें ये फूल दिया था! तो देवताओं की भी अपनी महत्त्वाकांक्षा होती कि नहीं? 'रामचरित मानस' में लिखा है, संतों को भी लोभ होता है; मधु का लोभ! 'मानस-मधुमास।'

सुंदर बन कुसुमित अति सोभा ।
गुंजत मधुप निकर मधु लोभा ।।

सुंदर वन, अतिशय सुशोभित वन है। भंवरें का झुंड-झुंड गुंजार कर रहे हैं। उसको मध का लोभ है। और मधुकर संत का पर्याय माना गया है। तो संत को लोभ होता है अमृत का। संत को अर्थ का, धर्म का लोभ नहीं होता। काम का तो होता ही नहीं। जगद्गुरु की बोली में तो मोक्ष का भी नहीं। यहां मधु मानी प्रेम, अमृत, आनंद; मधु मानी शाश्वती विश्राम। संत को अमृत का लोभ होता है और ये लोभ जितना ज्यादा हो अच्छा।

प्रनवउँ प्रथम भरत के चरना ।
जासु नेम ब्रत जाइ न बरना ।।
राम चरन पंकज मन जासू ।
लुबुध मधुप इन तजइ न पासू ।।

भरतजी के मन को भंवर कहा है और लोभी कहा है। संत लोभी है। जैसे भंवर फूल नहीं छोड़ना चाहता वैसे भरत जैसे संत का मन रामचरण में भंवर बनकर लोभी बन गया है। तो संत को लोभ है चरण का; दृढ़ आश्रय का। संत को एक ही लोभ होता है-

तव कथामृतं तप्तजीवनं कविभिरीडितं कल्मषापहम्।
श्रवणमंङ्गलं श्रीमदाततं भुवि गृणन्ति ते भूरिदा जनाः।।

'श्रीमद् भागवत' का 'गोपीगीत।' सच्चा संत लोभी होता है किस बात का कि अभी ओर हरिनाम जपूं; अभी ओर हरि कथा गाऊं; ओर सुनूं। ये महत्त्वाकांक्षा संत की होती है।

लोभ यदि विकार माना गया है फिर भी भरत का मन लोभी है। भंवरा क्या करता है? फूल से लिया लेकिन फूल की रोनक, फूल की खुश्बू, फूल का सौंदर्य जरा भी बिगड़ने नहीं देता और अंदर से थोड़ा ले लिया जरूर, वजन थोड़ा भी कम नहीं होता। वैसे साधु जहां से सत्य मिलता है, जहां से प्रेम मिले, जहां से करुणा मिलती है, लेता है।

युवान भाई-बहन, मधु प्राप्त करने के लिए उड़ान चाहिए। जीवन के सत्त्व-तत्त्व के लिए, जीवन के ब्रह्मानंद के लिए, परमानंद के लिए, जीवन की मस्ती के लिए युवानी में उड़ान भरनी चाहिए। संतों से सुना है, हनुमानजी ने चार बार उड़ान भरी मधु के लिए। हनुमानजी युवानी के प्रतीक है। आदमी खुद अपना आदर्श बने। दूसरों को आदर्श जानकर चलना ये उधार आधार है। उधार आधार कब छटक जाय! यहां परिवर्तन होता है, पुनरावर्तन नहीं। एक वृक्ष के दो पत्ते एक जैसे नहीं है।

हनुमान ने चार बार छलांग लगाई। जनमते छलांग मारी ये पहली छलांग। जनमते ही हनुमानजी ने सूरज को देखकर लगा कि ये लाल फल और पकड़ने गये! चार फल तो हनुमानजी के निकट पड़े थे, 'जो दायक फल चारि।' लेकिन हनुमानजी ने धर्म के लिए छलांग नहीं भरी। धर्म का तो खुद मूल है, धर्म की जड़ है। अर्थ के लिए तो उड़े ही नहीं। सवाल ही नहीं है। और काम; अखंड ब्रह्मचारी है, संयम शिरोमणी है। श्री हनुमानजी महाराज एक दूर का फल खाने के लिए उड़ान भरते हैं, जो मोक्ष है; जो ज्ञान का फल है, प्रकाश का फल है। युवानों को प्रकाश के लिए उड़ान भरनी चाहिए; उजाले के लिए। विवेक को ग्रहण करें।

दूसरी उड़ान; समंदर के इस तट से लंका के शिखर पर जाके उड़े ये दूसरी उड़ान। तब भी मुख में-

प्रभु मुद्रिका मेली मुख माँही ।
जलधि लांघि गये अचरज नाहीं ।।

वहां राममंत्र मधु है। इन्सान को, युवा को चाहिए अपनी जुबां पर हरि नाम रखे। हरिनाम का परिणाम आयेगा ही। हम हरिनाम ले और छोड़ दे उन पर कि निर्णय तू कर। उसीको तो भरोसा कहते हैं। खुद सोने के मुख में मणि मुद्रि बीच में। लंका में गये तो लंका भी सोने की। तो दूसरी उड़ान हरि नाम के साथ।

तीसरी उड़ान श्री हनुमानजी की वो है लंका के रणांगण में। लक्ष्मण मूर्छित है। सुषैण वैद ने आकर पहाड़ का नाम और औषधि का नाम बताया और हनुमान को कहा, जाओ। और हनुमानजी की ये तीसरी उड़ान थी वो बेहोश को होश में लाने की उड़ान थी। युवान की तीसरी उड़ान हरि की प्रेरणा से, सद्गुरुरूपी वैद की प्रेरणा से होनी चाहिए कि मेरी तरक्की दूसरों को जीवनदान बने। तीसरी उड़ान है मृतक जीयावनी उड़ान। उसका संशोधन ऐसा हो कि जो जीवन में हार गये वो फिर से उत्साहित हो जाय। संजीवनी लेकर श्री हनुमानजी लौटे तो एक चौथी उड़ान उड़ी वो सीधी अयोध्या के नंदिग्राम में पहुंचा दी। पहली उड़ान विवेक की, दूसरी उड़ान हरिनाम की, तीसरी उड़ान हारे हुए जीवन को उत्साहित करने की और चौथी उड़ान थी कोई महत्त्वाकांक्षामुक्त संत के शरण में पहुंचने की। जहां नंदिग्राम में भरतलालजी धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की रुचि से मुक्त महापुरुष बैठा वो चौथी उड़ान। ज्ञान से संत तक की चार यात्राएं श्री हनुमानजी के जीवन में युवान के लिए जीवन में हमारे लिए प्रेरणादायी है।

> विप्र के लिए, गायों के लिए, देवताओं के लिए और संतों के लिए प्रभु ने मनुष्य अवतार धारण किया। ब्राह्मण, गाय, देव और संत। समग्र समाज के प्रतिनिधि के रूप में नाम लिखे गये। विप्र का अर्थ छोटा-सा न किया जाय। यहां ब्राह्मण का केवल वर्ण वाचक अर्थ न किया जाय। ब्राह्मण का शरीर शूद्र कामनाओं के लिए नहीं होता। ब्राह्मण को मस्तक माना गया है और जो मस्तक शूद्र कामना का विचार करे तो वो ब्राह्मण ब्राह्मण नहीं रहता। यहां ब्राह्मण मानी समग्र जाति के जलचर, नभचर सब के कल्याण के लिए जिसके मस्तक में चिंतन चलता हो ऐसे ब्राह्मण की बात है। बिगड़े दिमाग की बात नहीं है। यहां वर्ण की बात नहीं है। वैश्विक व्यवस्था, वैश्विक चिंतन केन्द्र में है।

मैं छोटा था तो प्रायमरी स्कूल में पढ़ता था तब 'थ्रस्टी क्रो' का लेशन आता था; तृषातुर कौआ। कौआ तृषातुर है तो वो जग के किनारे मुख पर बैठा है। बहुत कोशिश करने पर भी जल जो नीचे था वहां तक चोंच नहीं पहुंच पाई। बड़ा क्लेवर है। तो एक-एक कंकर जल में ड़ालता है और जितना कंकर ड़ाले, पानी उतना उपर आता था। इतने कंकर ड़ाले कि पानी जग के उपर तक आया। तब ये तृषातुर कौआ उसमें चौंच ड़ाल के पानी पीता है। जीवन एक कुंजा है। उसके तले में कभी हमारा जीवन का सत्त्व-तत्त्व सूखा नहीं। प्रेमरस भरा है लेकिन देश-काल के अनुसार बहुत नीचे चला गया है। है जरूर। सरवाणी हजु सुकाणी नथी। और हम जीवात्मा है तृषातुर कौअे की तरह। तो कौअे की तरह थोड़े कुशल हो जाय, समझदार हो जाय। तो जैसे वो कंकर ड़ालकर पानी को उपर ला रहा है वैसे हम तृषित तो है, प्यास बुझानेवाली संपदा कुंजे में भले थोड़ी नीचे हो। हम पहुंचना पाते हो तो हरिनाम का एक-एक कंकर ड़ाल दो, 'हे हरि, हे हरि' करते-करते कि जीवन का सत्त्व-तत्त्व प्रेम जल उपर आयेगा और उपर आते ही उसको पीकर उड़ान भर सकते हैं। इसलिए हरिनाम की बड़ी महिमा है।

बाप, कैलास के सदाबहार वटवृक्ष के नीचे बैठकर भगवान शिव पार्वती की जिज्ञासा पर रामकथा का आरंभ करते हैं। पार्वती योग्य अवसर देखकर बाबा भोलेनाथ के सन्मुख आती है। शिवजी ने वामभाग में आसन दिया। पार्वती जिज्ञासा करती है, आप रामकथा द्वारा मेरे संदेह को निर्मूल करो। मुझे रामकथा सुनाओ। महादेव ने पार्वती का प्रश्न सुनकर अपने मन को ध्यानरस से बाहर किया। बाहर आते-आते राम का स्मरण किया महादेव ने और बोले, धन्य हो देवी! आप ने रघुपति की कथा के प्रसंग पूछे जो सकल लोक को पवित्र करनेवाली गंगा है। रामतत्त्व क्या है देवी, मैं तुम्हें बता दूं-

बिनु पद चलइ सुनइ बिनु काना ।
कर बिनु करम करइ बिधि नाना ।।

अलौकिक जिसकी करणी है वो तत्त्व है राम। वो निराकार नराकार हुआ। क्यों हुआ? और ईश्वर कार्य-कारण सिद्धांत से पर होता है फिर भी ऋषिमुनि कुछ निमित्त कारण बताते हैं। जब-जब धर्म की हानि स्थिति होती है तब परमात्मा लिंगरूप धारण करके संत-सज्जनों की पीड़ाहरण करते हैं।

पहला कारण जय-विजय। दूसरा कारण सती वृंदा का श्राप। तीसरा नारद ने प्रभु को श्राप दिया। चौथा कारण मनु-शतरूपा की कड़ी तपस्या। मनु-शतरूपा का आशीर्वाद मिला कि मैं अगले जनम में स्वयं तुम्हारे पुत्र बनकर आउंगा। अंतिम कारण राजा प्रतापभानु। प्रतापभानु रावण बना, अरिमर्दन कुंभकर्ण, धर्मरुचि नामक प्रधानमंत्री विभीषण बना। रावण, विभीषण और कुंभकर्ण ने कड़ी तपस्या करके दुर्लभ वरदान प्राप्त किये और रावण बेकाबू बन गया! जगत त्रस्त हो गया तब पृथ्वी गाय का रूप धारण करके ऋषिमुनिओं के पास गई। ऋषि सब देवताओं के पास गये। सब मिलकर ब्रह्माजी के पास गये। ब्रह्मा की अगवानी में सब मिलकर प्रभु की स्तुति करने लगे। समग्र अस्तित्व ने प्रभु को पुकारा। आकाशवाणी हुई, 'धैर्य धारण करो, कोइ कारण नहीं, लेकिन कई कारण मैं अंश सहित प्रगट हो जाउंगा।' साधक को प्रतीक्षा करनी है। पुरुषार्थ कर लिया, पुकार की, अब प्रतीक्षा। हम प्रतीक्षा नहीं करते! तो पुरुषार्थ, प्रार्थना, प्रतीक्षा तीन का मिलन हो जाय उसके बाद जो घटना घटती है वो है प्रागट्य, वो है परिणाम, वो है प्रगटीकरण।

धर्मधुरंधर दशरथजी का वर्तमान शासन है। वेदविदित महाराज की प्रसिद्धि है। कौशल्यादि प्रिय रानियां है। शुभ आचरण है। सब मिलकर हरिभक्ति करते हैं। एक बार दशरथजी को ग्लानि हुई कि मुझे पुत्र नहीं! जगत में कहीं से भी जवाब ना मिले तो चले जाना अपने गुरुजी के पास। आज राजद्वार गुरुद्वार गये। प्रणाम किया। शृंगी को बुलाकर पुत्रेष्टि यज्ञ करवाया। आख़िरी आहुति में महाराज वशिष्ठजी को अग्नि का चरु देकर कहा, 'राजाजी को देकर कहना, अपनी रानीओं को जथाजोग बांटे।' राजा ने आधा प्रसाद कौशल्याजी को दिया। एक चौथाई भाग कैकेयी को दिया। एक चौथाई का दो भाग करके कैकेयी और कौशल्या के हाथ से सुमित्रा को दिलवाया। तीनों रानियां सगर्भा स्थिति का अनुभव करने लगी। पूरा वातावरण बदलने लगा। पंचांग अनुकूल हुआ। जीवन में प्रेमयोग, हरिलगन, गुरु का अनुग्रह, एतबार, आशामुक्त भरोसा ये इकठ्ठे हो जाय तो कोई भी तिथि मधुतिथि है। इसमें अतिथि बनकर ठाकुर आकर हमें आनंदित करते हैं। देवता, पाताल के नागदेवता प्रभु की स्तुति करने लगे।

यहां जगनिवास कृपाला आया। माँ कौशल्या के विवेक से आया। सब से पहले माँ स्तंभित हो गई! अद्‌भुत रूप! चतुर्भुज रूप। माँ को ज्ञान हुआ। परमात्मा मुस्कुराये। माँ कहने लगी, आप शिशुलीला कीजिए। भगवान शिशु के रूप में आकर रोने लगे। बालक का रुदन सुनकर ओर रानियां संभ्रम होकर दौड़ आई! दशरथजी ने कहा, वशिष्ठजी को जल्दी बुलाओ, ये ब्रह्म है कि भ्रम है, ये सद्‌गुरु बिना कौन समाधान करे? वशिष्ठजी पधारे। पता लगा, ये साक्षात्कार परब्रह्म है। ये सुनते ही परमानंद में राजा डूब गये! बोले, बाजावालें को बुलाओ,

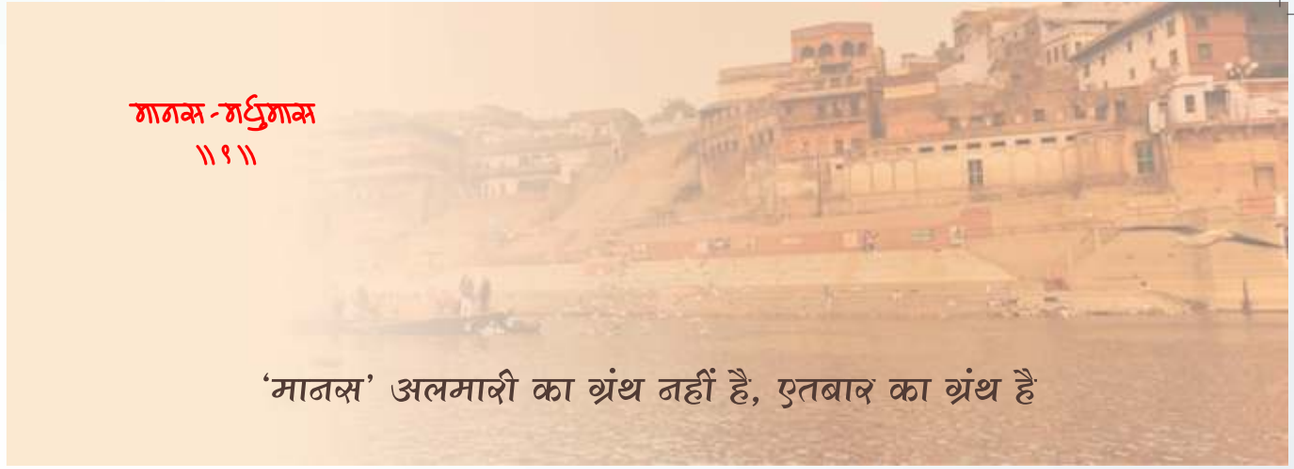

'मानस' अलमारी का ग्रंथ नहीं है, एतबार का ग्रंथ है

बाप, भगवान विश्वनाथ की नगरी में आज नववें दिन रामकथा का प्रेमयज्ञ चल रहा है उसका विराम का दिन है तब यहां की समस्त चेतनाओं को प्रणाम करते हुए माँ गंगा को मानसिक रूप में स्मरण करते हुए सभी पूज्यगण, परम आदरणीय काशी नरेश महाराजजी, आप सभी मेरे श्रोता भाई-बहन, सब को व्यासपीठ से मेरा प्रणाम।

'मानस-मधुमास' की हम मिलके सात्त्विक-तात्त्विक चर्चा कर रहे हैं। कथा में लिखा है कि कैकेयी ने भी एक पुत्र को जन्म दिया। सुमित्रा ने दो पुत्रों को जन्म दिया। आनंद में डूबी अयोध्या। एक मास कैसे बीत गया, पूरा मधुमास बीत गया, पता ही नहीं रहा! हो सकता है। मेरा तो अनुभव है ही। आप सब की चिठ्ठियां और पत्रों से पता लगता है और इतनी सालों से रामकथा की कृपा से मेरा परिभ्रमण चल रहा है। सब अनुभवों के आधार पर हम कह सकते हैं कि रामकथा के नव दिन कैसे बीत जाते हैं, यदि ये पता नहीं लगता तो स्वयं कथानायक परम राम प्रगट हुए हो तब शायद एक महीने का दिन हो जाय, रात-दिन का भान तक ना रहे तो ये स्वाभाविक है। ब्रह्मानंद और परमानंद के दिन कैसे बीते, हम नहीं समझ पाते! यद्यपि काल साक्षेप है। आइन्स्टाइन का ये सिद्धांत है। लेकिन दुःखद काल लम्हे बहुत लम्बें कर देता है और सुखद काल लम्हें को सिकुड़ देता है।

कुछ दिन बीतने के बाद नामकरण संस्कार होता है। और चारों पुत्रों का नामकरण भगवान वशिष्ठजी ने किया। कौशल्यानंदन का नाम रामचंद्र रखा गया। कैकेयी पुत्र का नाम भरत, सुमित्रा के दो पुत्र शत्रुघ्न और लक्ष्मण। वशिष्ठजी ने सूत्रपात कर दिया कि राजन्, ये तुम्हारे पुत्र नहीं है, ये वेदों के सूत्र है। कौशल्या के पुत्र के रूप में नाम रखा गया राम और ये हम सब को सूचना देने के लिए कि ये नाम महामंत्र है। दूसरा नाम भरत। भरत का अर्थ है भरन-पोषण करनेवाला। सब को भरनेवाला। किसीका शोषण ना करे, पोषण करे ये भरत। इसके बाद जिसका नाम लेने से शत्रुता मिट जायेगी उसका नाम शत्रुघ्न रखा गया। मेरी व्यासपीठ का मानना है कि रामनाम जपनेवाला सब का पोषण करता है और किसीसे दुश्मनी नहीं रखता। दुनिया तो दुश्मनी करेगी ही। ये उनका पक्ष है, हमारे मन में किसीके प्रति कटुता न हो ये रामनाम जापक जपनेवालों के लिए आवश्यक एक विद्या है। और फिर लक्ष्मण का नाम; लक्ष्मण को सब का आधार बताया है, शेषनाग में भी। इसका मतलब हुआ कि रामनाम जपनेवाला सब का आधार बने। जितने का बन पाये। हम पूरे जंगल की सिंचाई नहीं कर पाएंगे, जितने की कर सकते हो, हमारे आंगन में जितने गमले हो इतने को हम जल सींच सकते हैं। हमारी क्षमता के मुताबिक हम दूसरों के आधार बने। ये रामनाम जपने की लक्ष्मणविद्या है।

वशिष्ठजी ने नामकरण किया। चारों भाई कुमार हुए। विद्याभ्यास के लिए गये। अल्पकाल में सब विद्या प्राप्त की और औपनिषदीय विद्या को अपने जीवन में चरितार्थ करने लगे। समय बीतने लगा। और एक दिन विश्वामित्रजी आये। विश्वामित्रजी का चरित्र समझने जैसा है। ये क्षत्रिय है लेकिन तपस्या करके वो ब्राह्मण बने। बकसर में सिद्धाश्रम

में वो यज्ञयाग करते हैं। मारीच-सुबाहु विघ्न करते हैं। यद्यपि ये महात्मा तप के प्रभाव से राक्षसों को मार सकते थे। लेकिन क्रोध करना पड़े और साधना में क्रोध वर्ज्य है। क्रोध किया तो साधना पहले नष्ट होती है; जिस पर किया वो बाद में नष्ट होता है। ये घाटे का सौदा है। विश्वामित्रजी ने उनका प्रयोग नहीं किया। ध्यान किया और ध्यान में देखा कि जो परमात्मा है, जो ईश्वर है वो अयोध्या में अवतरित हो चुका है भूमि भार को उतारने के लिए। और विश्वामित्रजी अयोध्या आते हैं और राम-लक्ष्मण की मांग करते हैं। महाराज दशरथजी का पुत्र-वात्सल्यभाव है। मना भी करते हैं। आख़िर में राम-लक्ष्मण विश्वामित्र को दिये जाते हैं।

यात्रा निकली मुनि संग और जिसको मेरी व्यासपीठ कहती है कि राम के अवतारकार्य का श्री गणेश होता है ताड़का वध से। सामाजिक चिंतक को ये तकलीफ़ है कि रघुवंशी होते राम ने नारी का वध क्यों किया? नारी का वध तो अवध्य माना गया है। राम ने ये क्यों किया? 'मानस' में ऐसे सवाल है, जो आज तक लोग पूछते हैं! वाल्मीकि कहते हैं कि ताड़का को मारने के लिए राम ने विश्वामित्रजी को मना किया कि नहीं, मैं रघुवंशी हूं, मैं नारी का वध नहीं कर सकता। यद्यपि तुलसीजी पूरे प्रकरण में नहीं गये। वहां विश्वामित्रजी राम को समझाते थे, तुम ये करो, तुम ये करो। वहां ताड़का का पूरा चरित्र बताया है। ताड़का राक्षसी नहीं है। ध्यान दो, ये सुकेतु नामक यक्ष की कन्या है, दैवयोनि में आती है। गांधर्व, यक्ष, किन्नर, देव ये सब बिलग-बिलग कोटि के देवता ही है। सुकेतु कुबेर परंपरा का यक्ष है। कुबेर यक्ष है, धनपति है। ताड़का की सुनंद नामक एक यक्ष से शादी करवाई गई। लेकिन उस आदमी ने और ताड़का ने भी महर्षि अगस्त्य का अपराध किया। विवेकी महापुरुष है। एक घड़े में समंदर को लेकर बैठे। ये विवेक के बिना संभव नहीं। ये कुंभज है लेकिन अपराध किया और कुंभज के कारण वो ताड़का राक्षसी बन जाती है। और उसके पति के द्वारा उसको दो पुत्र की प्राप्ति होती है, मारीच और सुबाहु। ये राक्षसी होने के बाद उसके पुत्र भी असुर हो गये और दैवीसमाज को बहुत मुश्किल में डालने लगे! ताड़का ने स्वयं कई स्त्रीओं की हत्या की! ताड़का ने स्वयं कई निर्दोष पशुओं की हत्या की! ताड़का ने स्वयं कई साधुपुरुषों की हत्या की है! इतनी हत्या करनेवाली एक व्यक्ति यद्यपि स्त्री है तो भी क्या? एक स्त्री शरीर होने के नाते उसको रक्षा जाय? 'मानस' एतबार का ग्रंथ है। हरेक पात्र का ग्रंथों में कोई न कोई संदर्भ है। और इन संदर्भों में पूरा इतिहास देखने के बाद 'मानस' में आईये तभी 'मानस' समझ में आता है। इसलिए 'मानस' अलमारी का ग्रंथ नहीं है, एतबार का ग्रंथ है।

गोस्वामीजी को संशोधित करके सब ग्रंथ रखने हैं। तो जिसको दंडित किया गया 'मानस' में, उसके पूर्वजन्म का आचरण पढ़ना पड़ेगा। यदि मैं हजारों-लाखों लोगों का शोषण करूं; एक क्षण के लिए आप ले लो, हजारों-लाखों लोगों को गैर मार्ग पर चलने की गलत सुचना दे दूं और मोरारिबापू कहते हैं, हजारों लाखों लोग मार्ग चुक जाय तो मोरारिबापू व्यासपीठ पर बैठता है इसलिए सदा सन्मानित ही होना चाहिए? ये नहीं होना चाहिए। यहां केवल साधुता नहीं काम करेगी, साधुता तो सब को माफ़ कर देगी। लेकिन ईश्वर निराकार से साकार होकर आये हैं तब ईश्वर को-

जद्यपि सम नहिं राग न रोषू ।

परमात्मा सम है। उसको किसीके प्रति पक्षपात नहीं है।

गहहिं न पाप पूनु गुन दोषू ।

न किसीका पाप ग्रहण करता है न किसीका पुन्य। फिर भी उन परमतत्त्व को सम-विषम विहार करना पड़ता है, क्योंकि जगत कल्याण के लिए। विश्वामित्र प्रेरित करते हैं, मारना नहीं है, राघव, तारना है। ये बची रहेगी तो ओर हत्याएं करेगी, ओर मानव को खायेगी। उसका अपराध इतना बढ़ जायेगा।

चले जात मुनि दीन्हिं देखाई ।
सुनि ताड़का क्रोध करि धाई ।।

मुनि ने तो दिखाई, ये ताड़का! यहां ताड़कावध नहीं है, यहां द्वेषवध है। यहां ताड़कावध नहीं है, यहां हत्या की हत्या है। यहां वृत्ति के साथ दंड का विधान है, व्यक्ति के साथ दंड का विधान नहीं है। 'मानस' अद्‌भुत शास्त्र है!

एकहिं बान प्रान हरि लीन्हा ।

और ये बाण कौन-सा था उस समय? गुरु वचन पर विश्वास का बाण था। और जिस कर्म के पीछे राम की कोई आशा नहीं थी। आशामुक्त विश्वास का ये बाण था; इसलिए बाण जड़ नहीं था। बाण दूसरों को मार सकता है, विश्वास से भरा बाण दूसरों को निर्वाण प्रदान करता है।

दीन जानि तेहि निज पद दीन्हा ।

उस समय ताड़का को पता है कि मुक्ति के लिए दीनता चाहिए, आक्रमकता नहीं। तो आख़िर में उसने दीनता रखी। ताड़का का बिलकुल नखशिख जीवन बदल चुका। भगवान ने उसके प्राण हर लिए। दूसरा अर्थ संत करते हैं, ताड़का का प्राण हरि में लीन हो गया। और इस घटना के बाद विश्वामित्र को पक्का हुआ कि ये ब्रह्म है। पहले सैद्धांतिक पता था, लेकिन ताड़का को निर्वाण दिया तब बात प्रमाणित हुई। कभी-कभी हम सैद्धांतिक बात तो समझ लेते हैं लेकिन अनुभव क्या? पक्का तो तभी होता है। तुलसी कहते हैं, समर्पणभाव जगे तो रास्ते में ही कर डालो। घर तक जाने का संकल्प मत करो। वहां सोचा होगा विश्वामित्र ने कि आश्रम में जाकर सब शिष्यगण, मुनिगण जयजयकार करेंगे। मेरा समर्पण प्रशंसा के लिए ना हो, मेरा समर्पण प्रपत्ति के लिए हो। वही ही विद्या दे दी। अपने आप को समर्पित। पूरा का पूरा खाली कर दिया! सब रास्ते में दे दिये, बाद में आश्रम में लाये। ये पल को पहचानना। पल पाई तो बहुत हमनें, पहचानी कम! इसलिए तुलसी एक मंत्र लिखते हैं-

धन्य धरी सोइ जब सतसंगा ।
धन्य जन्म द्विज भगति अभंगा ।।

ताड़का अविद्या है और अविद्या से सदैव ये मेरा, ये तेरा, ये मारीच और सुबाहु पैदा होते हैं! अविद्या जब तक नहीं मरती तब तक मेरा और तेरा भी नहीं मिट सकता! इसलिए पहले अविद्या को मारा है। ताड़का वध उसके बाद यज्ञ रक्षा मारीच को तो फेंक दिया लंका में समंदर के तट पर और यहां सुबाहु को निर्वाण दे दिया। कुछ दिन विश्वामित्र के यज्ञ में रहे उसके बाद पदयात्रा आगे बढ़ी। भगवान चले मिथिला की ओर रास्ते में-

आश्रम एक दीख मग माहीं ।
खग मृग जीव जंतु तहँ नाहीं ।।

एक आश्रम आया। शून्यता थी आश्रम में। रामजी ने बाबा विश्वामित्र से जिज्ञासा की, ये किसका आश्रम है? ये अचेतन की तरह सुनमुन कौन पड़ा है? इतनी शून्यता क्यों है? ये कौन है? और विश्वामित्रजी अहल्या के चरित्र का कथानक कहने लगे-

गौतम नारि श्राप बस उपल देह धरि धीर ।

एक ही व्यक्ति है जिसने ताड़का को मरवाया, अहल्या का उद्धार करवाया। केन्द्र में विश्वामित्र है। कालान्तर में विश्वामित्र से पूछा गया कि दो नारीओं के बीच में आप थे और राम के द्वारा दोनों का काम आप ने करवाया तो ताड़का को मारा गया, अहल्या को उद्धारा गया! आप साधु ने ऐसा क्यों करवाया? तो विश्वामित्र ने कहा, केवल क्रिया मत देखो, परिणाम देखो, 'परसत पद पावन।' उसको भी पद मिला। इरादा तो दोनों का पद-दान है, क्रिया भिन्न है। तुलसी का राम विश्वामित्र के कहने पर चरणरज का दान करते हैं।

परसत पद पावन सोक नसावन प्रगट भई तपपुंज सही ।
देखत रघुनायक जन सुखदायक सनमुख होइ कर जोरि रही ।।

पाषाणी अहल्या पुनः चेतन प्राप्त करती है। भूल हो सकती है। दीक्षित दनकौरी का शे'र है-

या तो कुबूल कर मेरी कमजोरियों के साथ।
या छोड़ दे मुझे मेरी तन्हाईयों के साथ।

छोटी-सी भूल हम से हो जाय। प्रतीक्षा करो किसीके आने की। पाप किसी की छोटी-सी रजकण से खत्म हो जायेगा।

जेहि पद सुरसरिता परम पुनीता प्रगट भई सिव सीस धरी।
सोई पद पंकज जेहि पूजत अज मम सिर धरेउ कृपाल हरी।।

एक तिरस्कृत महिला को परमात्मा ने पुनः स्थापित किया ये है अहल्याउद्धार। प्रभु वहीं से आगे बढ़े। गंगा स्नान किया। तीर्थ के देवताओं को दान-दक्षिणा दी और फिर प्रभु जनकपुर पहुंचे। जनकजी मिले। रामको देखकर जनक अपना वैराग भूल गया! क्या छबि है! ये कौन है? इनके प्रति मेरा मन खिंचा क्यों जा रहा है? विश्वामित्र ने संकेत में समझाया। आनंद हुआ। मिथिला के सुंदर भवन में निवास करवाया। दो प्रहर का भोजन किया। थोड़ा विश्राम किया गया। सायंकाल को नगरदर्शन के लिये जाते हैं। पूरी जनकपुरी पागल हो गई! मेरे राघव को देख कौन पागल नहीं होता? पूरी नगरी राम में डूब गई है।

दूसरे दिन सुबह पुष्पवाटिका में गये। वहां जानकीजी और ठाकुरजी का प्रथम मर्यादामय मिलन है। उसके बाद जानकीजी गौरी की पूजा करती है और गौरी आशीर्वाद देती हैं।

जय जय गिरिबरराज किसोरी ।
जय महेस मुख चंद चकोरी ।।
जय गजबदन षडानन माता ।
जगत जननि दामिनि दुति गाता ।।

पार्वती ने जानकी को आशीर्वाद दिया कि तेरे मन में जो रम गया वो राघव मिलेगा। सगुन हुए। सखीओं के साथ जानकी माँ सुनयना के पास। यहां राघव फूल लेकर विश्वामित्र के पास आते हैं। किसीने राघव को पूछा कि बाग में तो फल भी थे, आप फूल ही क्यों लायें? बोले, शिष्य तो गुरु को फूल ही दे सकता है, फल तो गुरु ही दे सकता है। विश्वामित्र ने फल दिया।

सुफल मनोरथ होहुँ तुम्हारे ।

दूसरे दिन धनुषयज्ञ होता है। भगवान गजपंकज नाल की तरह धनुष भंग करते हैं। जानकी जयमाला पहनाती है। जयजयकार होता है। परशुराम बाबा आये। बोध प्राप्त कर चले गये। विश्वामित्र की सूचना पर दूत तैयार हुए। पत्रिका लेकर अवध गये। महाराज दशरथजी बारात लेकर मिथिला आये और मागसर शुक्ल पंचमी, विवाह पंचमी, गोरज बेला, प्रभु की-दूल्हे की सवारी निकलती है। चारों भाईओं की शादी मिथिला के विवाह मंडप में संपन्न होती है। राम के संग जानकी, भरत के संग मांडवी, लखन ऊर्मिला के संग और श्रुतकीर्ति शत्रुघ्न के संग। विवाह के बाद बारात बहुत रुकी है। मिथिलावाले जाने ही नहीं देते! बिदा की बेला आई। जनक जैसे परम ज्ञानी पुरुष के नेत्र डबडबा गये क्योंकि बेटी की बिदाई किसको नहीं स्पर्श कर पाती? रास्ते में निवास करते अवध का समाज अवध पहुंचता है। माताओं ने चारों की आरती उतारी। दिन बीतने लगे। विश्वामित्र की बिदाई। साधु बिदा ले रहा है तब दशरथ-परिवार उदास हो गया, 'हे बाबा, हम आप को क्या दे? एक बात मांग रहा हूं-

नाथ सकल संपदा तुम्हारी ।
मैं सेवकु समेत सुत नारी ।।

करब सदा लरिकन्ह पर छोहू ।
दरसनु देत रहब मुनि मोहू ।।

'अयोध्याकांड' में प्रभु का वनवास होता है। पीछे महाराज दशरथजी ने प्राणत्याग किया। पूरी अयोध्या को लेकर भरत चित्रकूट आते हैं और पादुका लेकर लौट जाते हैं। 'अयोध्याकांड' पूरा हो गया।'अरण्यकांड' में भगवान स्थलांतर करते अत्रि के आश्रम में गये-

नमामि भक्त वत्सलं । कृपालु शील कोमलं ।।
भजामि ते पदांबुजं । अकामिनां स्वधामदं ।।

अत्रि के आश्रम के बाद प्रभु सुतीक्ष्ण आदि संतों को मिलके कुंभज के पास आते हैं। कुंभज ने पंचवटी जाने को कहा। प्रभु गोदावरी के तट पर पंचवटी में आये। रास्ते में जटायु से दोस्ती की। पंचवटी में प्रभु ने लक्ष्मणजी को पांच प्रश्नों का आध्यात्मिक उत्तर दिया। उसके बाद शूर्पणखा दंड़ित हुई। खर-दूषण को निर्वाण प्राप्त हुआ। शूर्पणखा ने रावण को उकसाया। रावण ने योजना बनाकर जानकी का अपहरण किया। जटायु ने शहीदी ली और जानकीजी रावण के अशोकवन में रावण द्वारा यत्नपूर्वक रखी गई। यहां मृग को मारकर प्रभु लोटते हैं। सीताविहीन आश्रम देखकर ये ललित नरलीला थी इसलिए प्रभु रोने लगे। आगे बढ़े। जटायु को मिले। कबंध का उद्धार किया। शबरी के आश्रम में आये। शबरी के सामने नव प्रकार की भक्ति की चर्चा हुई। पंपा सरोवर आये। नारद आये। फिर 'अरण्य' को विराम दिया।

'किष्किन्धा' में प्रभु आगे बढ़े। सुग्रीव से मैत्री हुई हनुमानजी द्वारा।

तुम उपकार सुग्रीव ही किन्हा ।
राम मिलाय राज पद दीन्हा ।।

यहां 'किष्किन्धाकांड' में प्रभु के साथ तुलसी ने पांच संबंध जुड़वा दिया। हनुमानजी भगवान से मिले। हनुमानजी ने भगवान से पूछा, 'आप कौन है?' 'मैं दशरथ का बेटा हूं। ये मेरा भाई लक्ष्मण है। यहां मेरी पत्नी जानकी।' तो बोले, तीन सम्बन्ध हो गये, अब दो बाकी, दास और मित्र। आप सुग्रीव को मित्र बनाओ तो चौथा संबंध हो जाय। आप का दासवाला पद खाली हो जाय वहां मैं बैठ जाउंगा। 'किष्किन्धाकांड' में मित्र बने। वालिवध। सुग्रीव को राज मिला। बीच में चातुर्मास। हनुमानजीवाली टुकडी जानकी की खोज में गई। हनुमानजी को जामवंत ने कहा, आप लंका में जाओ। बाबा तैयार हुआ। 'किष्किन्धा' पूरा। 'सुन्दरकांड' आरंभ-

जामवंत के बचन सुहाए ।
सुनि हनुमंत हृदय अति भाए ।।

हनुमानजी लंका में जाते हैं। विभीषण से मिले। दोनों को मैत्री हुई। श्री हनुमानजी महाराज जानकी तक पहुंचे। माँ ने आशीर्वाद दिया। फल खाये, तरु तोड़े। बाद में लंका में गये और लंकादहन हुआ। श्री हनुमानजी माँ के पास संदेश लेकर लौटे। फिर राम के पास। जामवंत ने हनुमंतकथा सुना दी। उसके बाद अभियान चला। समंदर के तट पर पहुंचा। बीच में विभीषण की शरणागति हो गई। तीन दिन समुद्र के तट पर प्रभु ने व्रत लिया। समंदर ने मारग बताया। सेतु बनाने का शिवसंकल्प। 'सुन्दरकांड' पूरा।

'लंका' के आरंभ में सेतु बनाया गया। रामेश्वर भगवान की स्थापना की गई। भगवान लंका में सुबेल पर ड़ेरा डालते हैं। रावण के महारस का भंग किया। अंगद राजदूत के रूप में संधि का प्रस्ताव लेकर गया। संधि असफल। युद्ध अनिवार्य हुआ। एक के बाद एक राक्षसों का निर्वाण होता है। आख़िर में इकतीसवें बाण से रावण निर्वाण प्राप्त करता है। रावण का तेज प्रभु के बदन में समा गया। देवताओं को आश्चर्य हुआ। मंदोदरी ने शोक व्यक्त किया, स्तुति की। रावण का संस्कार, विभीषण को राज मिला।

प्रभु और जानकी का मिलन हुआ। ये ललित नर-लीला के लिए जो छाया ली थी, सब पूरा हो गया। पुष्पकारूढ़ राम अयोध्या की यात्रा करते हैं। हनुमानजी अयोध्या भेज दिये। ऋषि-मुनिओं को, संतों को, सब को ठाकुर मिले; वो निषाद-समाज सब को ठाकुर मिले।

केवट को पूछा, क्या दूं? बोले, मैंने नौका में बिठाया था, आप मुझे थोड़ा विमान में बिठाकर ले जाओ। भरतजी के पास हनुमान पहुंच जाते हैं। 'लंकाकांड' पूरा हुआ।

'उत्तरकांड' में भरतजी को ख़बर दी गई। विमान सरजू तट पर उतरा है। जन्मभूमि को प्रणाम किया है। और सभी बंदर मित्र मनुष्य के रूप में नीचे उतरे। वशिष्ठजी के चरण पकड़े शस्त्र छोड़कर। भरत-राम मिले, पता नहीं चला कौन वनवासी था! हजारों लोग थे उसी समय प्रभु ने अमित रूप धारण करके सब को मिले। सब को लगा, राम मेरे ही है। माँ कैकेयी के संकोच को तोड़ा। सुमित्रा और कौशल्या को मिले। ब्राह्मणों को वशिष्ठजी ने कहा, आज ही तिलक कर दें। दिव्य सिंहासन आया। प्रभु पृथ्वी को, मातोओं को, जनता को, सूर्य को, गुरुजनों को सब को प्रणाम करके सिंहासन पर बिराजित हुए। त्रिभुवन को रामराज्य प्रदान करते हुए वशिष्ठजी ने तिलक किया-

प्रथम तिलक बसिष्ट मुनि कीन्हा।
पुनि सब बिप्रन्ह आयसु दीन्हा।।

त्रिभुवन में जयजयकार हुआ। उसी समय कैलास से धूर्जटि आये और रामभद्र की स्तुति करने लगे। बार-बार वरदान मांगा शिवजी ने कि हम को सदा सत्संग देना। शंकर भगवान कैलास गये। मित्रों को निवास दिया। छः मास बीत गये। हनुमानजी के सिवा सभी मित्रों की बिदाई हुई। दिव्य रामराज्य का स्थापन हुआ।

समय मर्यादा पूरी हुई और जानकीजी ने दो पुत्रों को जन्म दिया। फिर तीनों भाईओं के घर भी दो-दो पुत्र प्रगट हुए। रघुवंश के वारिस का नाम देकर तुलसी ने 'मानस' में रामकथा को विराम दे दिया। बाद में बाबा कागभुशुंडि का चरित्र। गरुडजी सात प्रश्न पूछते हैं। भुशुंडिजी सात प्रश्नों का उत्तर देते हैं। गरुड फिर सद्गुरु के चरण में प्रणाम करके कृतकृत्य भाव अनुभव करके वैकुंठ जाता है। भगवान याज्ञवल्क्य ने कथा को विराम दिया कि नहीं, ख़बर नहीं। यहां शिवजी ने कथा को विराम दिया। और कलिपावनावतार गोसाई तुलसीजी ने अपने मन को और संतसमाज को कथा पूरी करते हुए आख़िर में कहा-

एहिं कलिकाल न साधन दूजा।
जोग जग्य जप तप ब्रत पूजा।।
रामहि सुमिरिअ गाइअ रामहि।
संतत सुनिअ राम गुन ग्रामहि।।

स्मरण सत्य है; गायन प्रेम है; सतत भगवान की कथा सुनने को मिले ये करुणा है। तुलसी ने' रामचरित मानस' को विराम दिया। ज्ञानपीठ, उपासना पीठ, कर्मपीठ और शरणागति की पीठ से कथा को विराम। मैं मेरी प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। विश्वनाथ, सदा हम पर अपना विश्वास बरसा रहे। ये 'मानस-मधुमास' कथा के रसमय सुक्रित हम सब ये गंगाजल को लेकर भगवान विश्वनाथ के चरणों में समर्पित करते हैं. 'तेरा तझको अर्पण।'

> मेरी व्यासपीठ कहती है कि राम के अवतारकार्य का श्री गणेश होता है ताड़कावध से। सामाजिक चिंतक को ये तकलीफ़ है कि रघुवंशी होते राम ने नारी का वध क्यों किया? ताड़का राक्षसी नहीं है। ध्यान दो, कुंभज के कारण वो राक्षसी बन जाती है। राक्षसी होने के बाद ताड़का ने स्वयं कई स्त्रीओं की हत्या की है! ताड़का ने स्वयं कई निर्दोष पशुओं की हत्या की है! ताड़का ने स्वयं कई साधुपुरुषों की हत्या की है! इतनी हत्या करनेवाली एक व्यक्ति यद्यपि स्त्री है तो भी क्या? हरेक पात्र का ग्रंथों में कोई न कोई संदर्भ है। और इन संदर्भों में पूरा इतिहास देखने के बाद 'मानस' में आईये तभी 'मानस' समझ में आता है। इसलिए 'मानस' अलमारी का ग्रंथ नहीं है, एतबार का ग्रंथ है।

मानस-मुशायरा

किस किस अदा से तूने जलवा दिखाके मारा।
आज़ाद हो चुके थे तूने बंदा बनाके मारा।
आंखों में तेरे जालिम छुरियां छुपी हुई है।
देखा जिधर तो तूने पलके उठाके मारा।

– अकबर ईलाहाबादी

किताबों से मिशाल दूं कि खुद को सामने रख दूं फ़राज़।
मुझसे पूछ बैठा कि मोहब्बत किसको कहते हैं?

– अहमद फ़राज़

कभी हंसती कभी रोती कभी लगती शराबी-सी।
मोहब्बत जिनमें रहती है वो आंखें और होती है।

– राज कौशिक

ईश्क जिसको फ़ितूर लगता है।
वो अभी खुद से दूर लगता है।
उसने कोई सफाई दी ही नहीं,
आदमी बेकुसूर लगता है।

नींद की गोलियां उसे भी दे,
चांद को भी यही बिमारी है।
बदनज़र से कभी नहीं देखा,
तेरी तसवीर भी कंवारी है।

– भावेश पाठक

‘रामचरित मानस’ सत्य, प्रेम और करुणा की त्रिवेणी है

वाल्मीकि, व्यास, तुलसी अवोर्ड (२०१५) अर्पण समारोह में मोरारिबापू का प्रेरक उद्‌बोधन

कलिपावनावतार पूज्यपाद गोस्वामीजी की प्रागट्य तिथि पर सब से पहले श्री हनुमानजी के चरणों में प्रणाम करते हुए, पूज्यपाद गोस्वामीजी की अजर और अमर चेतना को प्रणाम करते हुए, आज तुलसी जयंती के अवसर पर जिसकी हम वंदना करने जा रहे हैं और कृपापूर्वक ये सब पूज्य चरण यहां पधारे हैं। सब से पहले पूज्य दादाजी के चरणों में प्रणाम। अपनी नादुरस्त तबियत और उम्र के कारण यहां नहीं आ सके वृंदावन से और अपने प्रतिनिधि के रूप में आप यहां पधारे हैं। पूजनीय दादाजी को हम सब का प्रणाम निवेदित करिएगा। आप को प्रणाम। श्री अयोध्याधाम से ‘वाल्मीकि रामायण’ और सभी ग्रंथों के ज्ञाता आप यहां पधारे। आप को भी हम सब का प्रणाम। आप का लाभ तो दो-तीन बार मिला है। आप अच्छा गाते भी हैं। और ‘मानस’ के उपर आप का अपना चिंतन है। मैं आप को भी प्रणाम करता हूं। और ‘सस्तुं साहित्य’ प्रकाशन संस्था, जिसने ‘रामचरित मानस’ का गुजरात में विशेष रूप में प्रचार किया उस संस्था के अग्रणीओं को भी मेरा नमन। मैं फ़िर एक बार मेरे परम स्नेही नीतिनभाई वडगामा के एक वाक्य को यहां उद्‌बोधन करना चाहता हूं कि प्रशस्ति किसीकी ज़ाहिर में नहीं होनी चाहिए लेकिन प्रतीति तो कहनी ही चाहिए। इसलिए ये प्रशस्ति नहीं है। कुछ हमारी भी प्रतीति है।

इनमें सब से पहले मैं प्रणाम करूं पूज्य नगीनदास बापा को। वो कहीं रहनेवाले नहीं है। किसीके वश में होनेवाले नहीं है। नाइन्टी-फाईव रनिंग उसकी उम्र है! ऐसी उम्र में भी अकेले घूमनेवाले एक हमारे वडील। काठीयावाडी शब्द वापरूं बापा, पगे लागूं! आप के मन की पीड़ा मैं समझता रहा कि मैं कोई सेवा नहीं कर रहा हूं यहां की; ये उनकी पीड़ा। मैं कुछ करूं मेरी क्षमता के अनुसार। मैंने कहा, बापा, आप यहां रहते हमें आप के विचारों का लाभ मिलता है। जब-जब आप आते हैं, आप का लाभ मिलता है, सत्संग मिलता है। और वह कई विचार यहां कैलास गुरुकुल के लिए प्रस्तुत करते रहे इनमें से एक विचार था कि गोस्वामी तुलसीजी के समग्र साहित्य पर जहां जिसने जिस रूप में योगदान दिया हो और ग्रंथस्थ हुआ हो ये सब साहित्य ‘कैलास गुरुकुल’ में होना ही चाहिए। और ये बीज़ बोनेवाले बापा है। आज वो बीज़ का इतना तुलसी का पौधा जो वहां रखा गया था इतना हुआ है। इसमें महापुरुषों ने जल सिंचा हैं। मुझे आशा है, आ पंचाणुं वरस नो जुवान डोसो! जो इतना पराक्रमपूर्वक उद्‌घोषणा कर सकते हैं यहां, यदि किसीने ‘तुलसीघाट’ का तुलसी-दर्शन पर उपयोग नहीं किया तो उसकी तुलसी-आराधना कम रह जायेगी। ऐसा निवेदन जिसने उत्साह और एक परिपक्व चेतना से किया है। बस, बापा बस! ये होता रहे। फ़िर भी आप ने कहा कि हो न हो और हो तो हो, न हो तो नहीं, बस! हं बापा! होगा? होगा, होगा, होगा। बापा कहते हैं, साहब! ये मैं रोकूं बापा को प्रणाम करके कि बापा बोले, आप थोड़ा बोले। तो कहे, नहीं, मुझे यहां जाना है, यहां जाना है, यहां जाना है। इतनी उम्र में वो दौड़ते रहे! मैं ये कोई प्रशस्ति नहीं करता। मेरी अनुभूति कहता हूं।

और साहब! मैं जब प्रार्थना करूं विदेश में आये। क्यों विदेश में आते है वो? कि बापू जो बोले उसकी बात अंग्रेजी में यदि जुवान पीढ़ी तक पहुंच जाय इस सेवा के लिए आते हैं। यहां हम पहले बहुत बैठते थे। अब तो समय कम रहता है। आप भी अपने कार्य में होते हैं। लेकिन बहुत बैठे हैं। कभी बुद्ध पर चर्चा, कभी महावीर पर, कभी लाओत्सू पर, कभी अरविंद पर, कभी किसी बस, घंटें बैठते वैसे और विचारों का लाभ। तो, ये बापा के प्रति मेरी शरणशीलता है। आज-कल ‘शरणशील’ जो शब्द बहुत वो तो मुखर हुआ है, इसके लिए ये शरणशीलता! और किसी साहित्य, किसी कविता, कोई गद्य, कोई पद्य, कोई संगीत, फ़िर लोकसंगीत, सुगम संगीत, शास्त्रीय संगीत, शेरो-शायरी, दुनिया की कोई भी शुभ विधा की शरण में जाना वो तलगाजरडा का अधिकार नहीं है क्या? ये क्या मेरा अधिकार नहीं है? यहां कोई शरणशील होकर नहीं आता, साहब! और मैं कभी चाहूं न, अल्लाह करे मुझे कभी ये कुबुद्धि न सुझे! मैं दिल से कहता हूं कि साहित्य और शुभ वस्तु के शरणों में रहना क्या कोई गलती है? कोई पाप है? कोई अपराध है? तो मैं अपराधी हूं। आई अेम रेडी, बापा! बापा होय त्यारे मने अंग्रेजीमां बोलवानी इच्छा थाय! अने गुजरातीमां कही दउं। आ बधां समजे ज छे। न समजे तोय वांधो नथी! आपणाथी उंमरमां अने ज्ञानमां वृद्ध होय ने इ कोई दिवस आपणे खोळे न बेसे! आपणे ज एने खोळे बेसीए छीए। ‘आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः।’ जो हमें दिया है। हमें आत्मसात् करना है साधुता के नाते। तो ‘शरणशीलता’ बहुत मेरे लिए प्यारा शब्द है, पवित्र शब्द है। तो बापा को अच्छा नहीं लगेगा। मैं आज ज्यादा बोल रहा हूं। लेकिन बापा ने गुरुकुल को अपने विचारों का अपनी इस उम्र में दौड़-दौड़कर बहुत आशीर्वाद दिया है। मैं बापा को प्रणाम करूं। और रघुवीरभाई की मुझे कोई ख़बर नहीं और हरीशभाई ने कहा, शायद रघुवीरभाई आये। मैंने कहा, ये तो बहुत बड़ी मेरे लिए आनंद की बात है,

क्योंकि एक तो हिन्दी विभाग आप ने संभाला था। तुलसी को आप ने पढ़ाया है। तुलसी साहित्य और हिन्दी साहित्य पर आप का अधिकार भी है। और आप का हरेक प्रसंग में करीब-करीब हम को लाभ मिलता है। कल अचानक मैं सभागृह में गया रघुवीरभाई! और साहब-

तुलसीदास चंदन घसे अने तिलक करे रघुबीर।

ये जो न होय आज घाट पर, तुलसी के घाट पर तो तो ये हमारा ये घाट अधूरा रह जायेगा। इसलिए मैं रघुवीरभाई का पूरे दिल से नमन करता हूं। और राजेन्द्रभाई भी एक साधक, साहब! पूज्य दलपतबापू पधारे। ऐसे ही हमारे जानकीदासजीबापू पधारे। और कृष्णानंदजी; हमारे पूजनीय महाराजश्री उसको तो हमें रखना ही पड़ता है क्योंकि पहली बार सभी कथाकारों को यहां अेकत्रित करने में आप का बहुत श्रम और योगदान रहा। और आप कृपापूर्वक आ जाते हैं। मैं नमन करता हूं। और आप को एक विगत मैं देना चाहता हूं कि आकाश में, पृथ्वी पर, कथा में मेरा निवास हुआ या तो वो जहां निवास करे एक रात के लिए वहां हर जगह सतत चौपाईओं का गान करनेवाले ये एक हमारे महात्माजी। अब कौन-सी चौपाई गाते हैं वो आप जानने की कोशिश मत करियेगा! तो ऐसे महात्माजी अवसर पर आये हैं। मेरे गुरुकुल के सभी छात्र जो मूक सेवा करते हैं। मैं उसका गौरव करता हूं कि वैश्नव साधु जो देहातों में रहनेवाले एक करीब-करीब स्वभाव से रांक होते हैं, ऐसे जो बच्चें है हमारे यहां। मैं तो दूसरों की विद्या संस्थाओं में प्रवचन देने जाता हूं। चिफ़ गेस्ट होता हूं। मैं चिफ़ स्पीकर होता हूं। मेरे गुरुकुल में मैंने कभी प्रवचन नहीं दिया! न कुछ कहा, न सुना! ये बच्चें सब और फ़िर किसीका नाम नहीं लूंगा। जो बहुत हमारे काम में लगे हैं उन सब को आज मैं दिल से याद कर रहा हूं।

'तुलसीजयंती' का यह पावन पर्व। तुलसी के बारे में तो क्या कहा जाय? तुलसी का ग्रंथ, ग्रंथ नहीं है, सद्ग्रंथ है। तुलसी का ग्रंथ, ग्रंथ नहीं है, प्रेमग्रंथ है। तुलसी का ग्रंथ, ग्रंथ नहीं है, करुणाग्रंथ है। मेरे लिए तुलसी का 'रामचरित मानस' ये सत्य, प्रेम और करुणा की त्रिवेणी है जिसमें हम रोज यथासमज, यथासमय, यथाभाव नहाते रहते हैं, स्नान करते रहते हैं। मेरे लिए 'रामचरित मानस' व्यक्तिगत आस्था में; हां, कोई स्वीकार करे न करे उसमें मैं जाना नहीं चाहता और किसीको न स्वीकार करना ये उनका अधिकार भी तो है। मैं भी कभी-कभी तो नहीं कहता हूं, बापा भी जानते हैं कि मैं तुलसीदासजी के 'रामचरित मानस' से कई बातें ऐसी है कि अभी मेरी छोटी बुद्धि उसको स्वीकार नहीं कर पाती है। यानी मैं कोई केवल गुनगान ही गाता रहूं ऐसी बात नहीं। सुमनभाई शाह का एक वाक्य है, 'या तो समाज में बहुत प्रशंसा होती है यातो इतनी ही गलत आलोचना होती है। मूल्यांकन कहां होता है?'

आओ, 'तुलसी जयंती' के इस पावन अवसर पर इस सद्ग्रंथ का हम सब सही मूल्यांकन करें। कल बापा भी कह रहे थे कि विवाद भी हो सकते हैं कि कई लोगों को तुलसी की यह बात अच्छी न लगे। लेकिन तुलसी ने तो एक शिवसंकल्प पहले से ही रखा था कि मैं संवाद की रचना कर रहा हूं। यहां विवाद और अपवाद और दुर्वाद के लिए कोई जगह नहीं है। फ़िर भी हमारी कच्ची बुद्धि, हमारा बचपना यदि ऐसा कुछ करे! तुलसी बार-बार 'रामचरित मानस' में फ़िर भी कहते हैं कि मेरे मन में, मेरे चित्त में ये बात उतरी नहीं। 'तदपि कही गुर बार ही बारा।' तब जाके कुछ समझ में आई। तो हम तो कैसे लोग! तो बहुत स्वाध्याय करते हुए, प्रवचन करते हुए भी कुछ बातों से यदि सहमती न होती हो मेरी अल्पमती से तो ये मेरा अधिकार है। ये मेरा स्वातंत्र्य है। तुलसी भी मेरा स्वातंत्र्य छीन नहीं सकते। मेरा स्वातंत्र्य है। और मुझे जब लोग कहते हैं कि बापू, तो आप तो तुलसीदास! मैंने कहा, ख़बरदार, बोले तो! मुझे मोरारिदास रहने दो। दूसरा तुलसी कोई हो ही नहीं सकता। दूसरा तुलसी कभी हो सकता है? दूसरा व्यास कभी हो सकता है? व्यास परंपरा हो सकती है। व्यास विचार। पूज्य पांडुरंगदादा ने एक ग्रंथ तैयार किया था।

उसका नामकरण मुझे बहुत अच्छा लगा, 'व्यास विचार।' व्यास विचारों का ये पवित्र प्रवाह है। दूसरा व्यास हो सकता है? 'नमोस्तुते व्यास विशालबुद्धि।' कौन तुलना करेगा? तुलसी तुलसी है। बस, इनफ़! पर्याप्त! पंडित रामकिंकरजी महाराज ने, साकेतवासी ने बहुत अच्छा कहा था। मैं बार-बार ये दोहरा रहा हूं इस महापुरुष के वाक्य को कि कभी किसी पत्रकारों ने पूछा कि आप को लोग तुलसी के अवतार मानते हैं। आप की राय क्या है? आप क्या कहते हैं? तो पंडितजी ने बड़ा प्यारा जवाब दिया था कि तुलसी ने एक 'रामचरित मानस' का निर्माण किया। लेकिन उनके 'रामचरित मानस' ने कई तुलसीदासों का निर्माण कर दिया है। इसलिए ये राम के समान राम, समुद्र के समान समुद्र, आकाश के समान आकाश, वैसे तुलसी के समान तुलसी। ओर कोई हो ही नहीं सकता। तो मेरे लिए तुलसी और तुलसी का ग्रंथ जो मैं सद्ग्रंथ कहता हूं वो वैश्विक है। विद्वानों, साहित्यविदों जिन्होंने काव्य के सिद्धांतों को समझा है, आत्मसात् किया है, नवनिर्माण भी किया है वो महाकाव्य की जो परिभाषा निर्मित करे उसमें भी 'रामायण' और 'महाभारत' को हमनें महाकाव्य का दरज्जा दिया है। लेकिन गुणातीत श्रद्धा जिसमें निवास करती हो; प्लीज़, ध्यान देकर सुनिएगा; गुणातीत श्रद्धा, न रजोगुणी, न तमोगुणी, न सतोगुणी। गुणातीत श्रद्धा के जो धनी है उसके लिए तुलसी का शास्त्र, तुलसी का सद्ग्रंथ महाकाव्य मात्र नहीं है, 'महामंत्र जोइ जपत महेसू।' महामंत्र है।

मेटत कठिन कुअंक भाल के।

तो ये केवल महाकाव्य मेरी व्यक्तिगत निष्ठा में नहीं है, ये महामंत्र है। ऐसे तुलसी की पावन जयंती पर कहने की तो बहुत इच्छा होती है। कारण के हमणां वीस दिवसथी साव नवरा बेठा छीए! हवे जल्दी-जल्दी पांच सितंबर आ जाय और नासिक में मैं 'लोकाभिरामं...' ये शुरू करूं। क्योंकि मेरा विश्राम ही मेरी व्यासपीठ है। इसके सिवा मेरा कोई विश्राम नहीं है। इसलिए मैं बोलूं तो बहुत बोलूं; बहुत। तुलसी पर बोलने में तो मैं क्यों कसूर छोडूं? लेकिन मुझे आज इतना ही कहना है कि तुलसी चतुर्पुरुषार्थ में आस्था रखते हैं। धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष। उसको पुरुषार्थ कहो, फल कहो, जो कहो, उसमें उनकी आस्था है। 'जो दायक फल चारि।' कहकर वो अपने विचार प्रस्तुत करते हैं। तो तुलसी जब इस विचार को प्रस्थापित करते हैं, तो तुलसी का धर्म कौन? कल आप ने स्मरण किया विशिष्टाद्वैत परंपरा से आप आये। ये महिमा है, ये गौरव है। लेकिन तुलसीदासजी किस धर्म के अनुयायी है? तुलसी का धर्म क्या है? और आज दुनिया में 'धर्म' जैसा एक पवित्र शब्द हम कहीं भी जोड़ देते हैं! जो धर्म न भी हो! उस 'संप्रदाय' बड़ा प्यारा शब्द है। मुझे अच्छा लगता है। संकीर्ण हो जाय तो फ़िर उनकी जिम्मेवारी। हम क्या करें? लेकिन ये भी रामानुज संप्रदाय हो, निम्बार्क हो, वल्लभ हो, ये जो जो भी हो संप्रदाय लेकिन यह तो संप्रदाय भी नहीं है! केवल पंथ है। जो तुलसी ने कहा-

दंभिन्ह निज मति कल्पि करि प्रगट किए बहु पंथ ।

केवल पंथ है। और वो पंथ भी को'कना खेतरमां पाडेली केडियुं छे! के सूनुं खेतर छे, हालो शोर्ट कटमां नीकळी जईए! मैं क्यों तुलसी के पीछे पागल हूं? क्योंकि पागलों के पीछे पागल होकर जाना पागलों का धर्म है। तुलसीदासजी महापागल है। और प्रभु, पागल का अर्थ गुरु नानकदेव ने किया था। गल मानी बात और पा मानी छोटी-सी। जो एक छोटा-सा सूत्र पा जाय और आत्मसात् करे वो पागल है। जो गल को पा गया वो पागल है। कभी स्वामी रामतीर्थ ने अमरिका के सरेआम रास्ते पर कहा था-

इन बिगड़े हुए दिमागों में भरे अमृत के लच्छे है।
हमें पागल ही रहने दो हम पागल ही अच्छे हैं।

ऐसा रामतीर्थ ने अपनी शायरी में कभी ललकार किया था। तो क्यों तुलसी के पीछे हम दौड़ रहे हैं? हां, तुलसी रोक ही देता है। तुलसी गंगाजल देता है। ये तो है ही।

उसके कारण मौज़ कर रहे हैं। अभी मुंबई मेरा एक श्रोता आया। बापा, सत्तर साल की आयु होगी! दूर बैठे थे। मेरा ध्यान वहां रहा। मैंने कहा, थोडी व्यस्तता कम हो तो मैं दादा को बुलाउं। थोड़ी कम हुई। मैंने बुलाया। 'बापू, पचास साल से आप को सुनता हूं। कथा सुने बिना रह नहीं सकता हूं। लेकिन एक बिनती करूं। पछी गुजरातीमां कीधुं के हजी अठवाडियुं नथी थयुं त्यां तो बीजा गाममां 'लोकाभिरामम् रणरंग धीरम्...!' थोडुंक ओछुं करो, ओछुं करो, ओछुं करो! ये क्या पागलपन है! उम्र के हिसाब से मेरे आरोग्य के लिए वो चिंता कर रहे थे। ये उनके शब्द। ये पागलपन तो भी है यार और क्या! क्योंकि मेरे तुलसी पांच बस्तु के पागल थे। एक, तुलसी में रूप का पागलपन था। उसके पूर्व इतिहास को छोड़ दीजिए। उसमें आधार कितना है, आधार कितना नहीं है। और बापा से पूरा मैं सीख गया हूं कि जो बोलना साधार बोलना। तो बाप! तुलसी का रूप के प्रति अद्‌भुत पागलपन है। दूल्हा हुआ भगवान राम; इन मनीषीओं के पास मैं क्या कहूं? लेकिन तुलसीदासजी ने जहां-जहां रामरूप का, रामछबी का रामशोभा का जो-जो बहुत अद्‌भुत भाव से वर्णन किया है वहां से पता लगता है कि आदमी रूपदीवाना है।

लाजहिं तन सोभा निरखि कोटि कोटि सत काम ।

ये रूपदीवाना आदमी है। ये जगतभर के रूपों में अपने स्वरूप का सहयोग लेकर कोई ऐसे विशेष रूप की खोज में है कि जो रूप मिलने के बाद ये सभी भटकाव खत्म हो जाय। इसलिए 'श्री रामचंद्र कृपालु भज मन हरन भव भय दारुणं। कंदर्प अगणित....' छोड़ो। बहुत प्रमाण दिये जा सकते हैं ये रूपदीवाने का। तुलसी प्रेमदीवाना आदमी है।

सीता राम चरन रति मोरें ।
अनुदिन बढ़उ अनुग्रह तोरें ।।

भरत के मुंह से जो बुलवा रहे हैं, ये तुलसी प्रेमदीवाना व्यक्ति है। आख़िर में क्या कहते हैं?

तिमि रघुनाथ निरंतर प्रिय लागहु मोहि राम ।

और तुलसी को, शास्त्र सद्‌ग्रंथ विराम ले रहा है तब काम को याद करना और लोभ को याद करना कोई परहेज़ नहीं है। तुलसी को लकीर का फ़कीर कहनेवाले प्लीज़, करबद्ध ये तलगाजरडानो बावो प्रार्थना करे कि एक बार 'रामचरित मानस' को अपनी विवेकबुद्धि से पढ़ लो, फ़िर कोमेन्ट करो! जो आदमी सद्‌ग्रंथ के समापन में काम को याद करे ये उनकी बेफ़ीकरी, ये उनका अभय क्योंकि रामप्रियता के साथ खुद को जोड़ना है। उनको कोई दृष्टांत नहीं मिल रहा है। मैं याद करूं स्वामी रामभद्राचार्य, चित्रकूट, जगद्‌गुरु, तो एक बार मैं सुन रहा था तो आप तो फरमा रहे थे कि तुलसी जब लिखने बैठते थे तो दुनियाभर के विशेषण, दुनियाभर के काव्य के अलंकार आदि-आदि लाईन में खड़े रहते थे, गोस्वामीजी, मेरा उपयोग करो, मेरा उपयोग करो, मेरा उपयोग करो! मुझे यहां समाविष्ट करो। मुझे! इतनी अद्‌भुत संपदा के धनी, शास्त्र के इस सद्‌ग्रंथ के अंत में काम को याद करने में उसको कोई परहेज़ नहीं है। लोभ को याद करने में कोई अस्पृश्यता नहीं है। जीवन के अनुभवों को अनदेखा नहीं करना चाहिए, ये आदमी को विषय से यदि साधक बनना हो तो। सिद्ध बनने की तो कोई ईच्छा ही नहीं। कम से कम साधक बने। और साधक का मेरा छोटा-सा अर्थ है, जो दुनिया में किसीको भी बाधक न बने वो साधक है। पछी मारा गामनो चोयणी पहेरेलो कणबी के आहीर कोई हो के मारा गामनो दलित हो के नाई हो। मारा गाममां बधा ज वर्ण वसे छे। लगभग आ एक ज गाम एवुं हशे! तो मेरे कहने का मतलब हम साधक बने, किसीके बाधक न बने। तो तुलसी को ये याद आये; ये है उसकी प्रेमदीवानी राम के प्रति। अभी-अभी ओसमाण मीर के कंठ से हम सब ने सुना-

चहो मैं सुगति सुमति संपति
रिद्धि सिद्धि बिपुल बड़ाई ।

ये आदमी सुगति को ठुकरा रहा है और जो आदमी 'मानस' में लिखता है-

जहां सुमति तहँ संपति नाना ।

जहां सुमति होगी वहां संपत्ति होगी। ये आदमी कहता है, जो सुमति संपत्ति दे वो सुमति मुझे नहीं चाहिए क्योंकि संपत्ति फ़िर अहंकार देती है। संपत्ति फ़िर स्पर्धा में डालेगी। संपत्ति फ़िर श्रद्धा की हत्या कर देगी। इसलिए ऐसी सुमति भी मुझे नहीं चाहिए। 'विनय' अद्‌भुत है। 'विनय' के बिना 'मानस' समझा नहीं जाता। और 'विनय' में प्रवेश भी बहुत गुरुकृपा हो तभी ही हो सकता है ऐसा मेरा समझना-मानना है। तुलसी का धरम क्या? मुझे लगता है कि रामदीवाना, रूपदीवाना ये प्रेमदीवाना और 'देखे बिनु रघुनाथ पद जियकी करनी न जाई।' ये इतना ही एक टुकड़ा है। तुलसी दर्द-दीवाने का प्रतीक है जो मीरां को लगा था। ये उनका दर्द दीवानापन है। ये तीसरा दीवानापन तुलसी का है। चौथा दीवानापन तुलसी का है, नाम दीवाना है।

एहि महँ रघुपति नाम उदारा ।

इनमें काव्य के, साहित्य के सभी रस हैं। है। कई फलक पर है। तुलसी ने उसको याद नहीं किया। इनमें छंद-प्रबंध की सभी विधाएं है; है। तुलसी ने उसको याद नहीं किया। प्रास, जो-जो साहित्य के, जो-जो काव्य के लक्षण हो वो सब होते हुए याद नहीं किया और स्पष्ट रूप में उसके नाम दीवानगी प्रस्तुत की कि-

एहि महँ रघुपति नाम उदारा ।

उसमें मेरे ठाकुर का नाम है। तो ये नामदीवाना है। और पांचवां पागलपना तुलसी का है वो संतदीवाना है।

कबहुँक कौन यही रहनी रहौ...

'विनय' में कहते हैं। और महात्मा करे, और मैं भी कभी कोई ऐसे साधु की जैसे जीवनी होती है ऐसा जी लूं-

कबहुँक कौन यही रहनी रहौ...

तो तुलसी कहे, ये पांच प्रकार का पागलपन। उस पागलपन के कारण उसमें जो विशेष धर्म प्रगट हुआ वो तुलसी का धर्म कौन है? जहां राम के बारे में आप सब जानते हैं, 'रामो विग्रहवान धर्म।' तुलसी का धर्म राम है। बस, इसके अतिरिक्त उसका कोई धर्म नहीं है। तुलसी का अर्थ राम। बस, उसका अर्थ, उसकी संपदा, उसका वैभव, उसका विलास जो कहो उसका विनय का आश्रय करो तो उसका चिद्‌विलास ये इनका जो वैभव है, इनका जो अर्थ है। अपनी भाषा में अर्थ जो संपदा है वो तुलसी का अर्थ भी राम है और तुलसी का काम भी राम है।

बलकल बसन जटिल तनु स्यामा।
जनु मुनिबेष कीन्ह रति कामा ।

स्थान देखो, संदर्भ देखो, व्रत देखो। कहां है रामजी? राजसिंघासन पर नहीं है; अयोध्या में नहीं है; राजलिबास में नहीं हैं; चित्रकूट में उदासीन व्रतधारी हैं। कहते हैं 'बलकल बसन।' बल्कल वस्त्र परिधान किए हैं। 'जटिल तनु स्यामा।' जटा है, श्याम वर्ण है। लेकिन तुलसी को क्या दिखाई दिया? 'जनु मुनिबेष कीन्ह रति कामा।' जानकी में उनको रति का दर्शन हुआ है और राम में उनको काम का। तो तुलसी का काम भी राम है। तुलसी का अर्थ भी राम है। तुलसी का धर्म भी राम है। यद्यपि जहां तक मैं समझ पाया हूं अथवा तो मैं जिस बात को कुबूल करके चल रहा हूं, तुलसी शायद मोक्षमार्गी नहीं है। यद्यपि उनका मोक्ष भी राम है।

राम भजन सोई मुक्ति गोसांई।

उनका मोक्ष राम है। लेकिन तुलसी शायद मुझे माफ़ करिए, ये मेरा व्यक्तिगत अभिप्राय है। ये मोक्ष, वो तो कहते हैं, 'जनम जनम रति राम पद।' मुझे जनम-जनम राम के चरणों में रति और पूरी दुनिया जानती है, मैं तो मोक्ष में मानता ही नहीं हूं! तुलसी का मोक्ष भी राम है। और पंचम पुरुषार्थ जो प्रेम है, वो तुलसी का प्रेम पदार्थ भी राम है। जिसका राम ही राम सबकुछ है ऐसा। और राम जिसका धर्म हो जाय वो संकीर्ण नहीं हो सकता। और राम जिसका धर्म हो जाय वो संकीर्ण हो जाय तो समझना कि उसने राम का नाम उपयोग किया है, अनुभव नहीं किया है। जिसका अर्थ राम है, जिसका काम राम है और जिसका मोक्ष भी राम है, सबकुछ जिसका राम है ऐसे एक महाविभूति। मैं कभी-कभी ऐसा बोलता हूं मेरे मनमें उठता है तब कि भगवान कृष्ण कब

आये, मुझे ख़बर नहीं। आये तो अच्छा है, न आये तो मेरे पास हमारे देश के पास इतने भागवतकार है कि कृष्ण का काम पूरा करने में लगे हुए हैं। भगवान वाल्मीकि आये तो 'एरी सखी मंगल गाओ जी...।' एनुं सामैयुं न आए तो भी 'वाल्मीकि रामायण' के मर्मज्ञ हमारे पास है। रोज नया-नया मार्ग हमें दिखायेंगे। 'रामचरित मानस' के इतने बहुत अनुभवी वक्ता महोदय हमारे पास है लेकिन तुलसी बहुत-बहुत विशाल दृष्टि से फैला हुआ आदमी हैं। वो किसी न किसी रूप में लेकिन तुलसी तो दूबारा नहीं आ सकेगा। इस अर्थ में वो मोक्ष में ही मान लो कि फ़िर आना-जाना! लेकिन मोक्ष है क्या? मुझे ख़बर नहीं। क्या मोक्ष? कहां? इतने वैज्ञानिक पूरी जिंदगी लगाकर बैठे हैं! होगा जरूर! कहीं मेरे कागभुशुंडि ने देखा है तो होना ही चाहिए ब्रह्मांडों में। लेकिन इतनी सुंदर पृथ्वी में कहीं खोज नहीं पा रहे हैं। इतनी प्यारी पृथ्वी! इस पृथ्वी पर इतने तीर्थ, इतनी नदियां और इस पृथ्वी पर हम मानवदेह लेकर आए। मेरा तो मनोरथ पूरी दुनिया जानती हैं कि बार-बार आना है, तलगाजरडा में ही आना है और व्यवस्था हो तो सावित्री माँ की कूख से ही आना है, यदि व्यवस्था हो तो! बाकी हमें कोई मोक्ष-बोक्ष! तो तुलसी का मोक्ष भी राम है। तुलसी का प्रेम पदार्थ भी राम है।

ऐसे पूज्यपाद गोस्वामीजी की इस प्रागट्य तिथि पर इतना एक छोटा-सा कार्यक्रम सात्त्विक मुझे लगता है। और मेरा यहां का कार्यक्रम को मैं कुछ भी कहूं तो अच्छा नहीं लगेगा। लेकिन मने गमे छे तो गमे छे, अेमां हवे तमे शुं करशो ल्यो! तमे करशो शुं इ मने, शुं करी लेशो, एवी भाषा तो हुं बोलुं नहीं, बोली ग्यो! पण एवी भाषा हुं न बोलुं। पण एवी भाषा मारी भाषा नथी। पण मने गमे छे, मने गमे छे। ल्यो पूछो आ जयदेवने, पहले तो मैं रोज गुरुकुल जाता था कि गुरुकुल होकर मैं यहां आता था। अब गुरुकुल भी ज्यादा नहीं जा पाता हूं। आठ दिन में कभी जाउंगा। मैं जाउं सरस्वतीमंदिर, चारों ओर देखूं तो मैं कहता हूं जयदेव को कि ख़बर नहीं, अपना है इसीलिए ऐसा लगता होगा लेकिन गुरुकुल लगता है अच्छा। पता नहीं क्यों अच्छा लगता है? बस! फ़िर अपना है। ये अपना आशियाना सभी को अच्छा लगता है। ये भी कारण हो सकता है। जिस धरा पर तुलसी जैसे महापुरुष का प्रागट्य हुआ और उसकी पावन जन्मतिथि पर आप सब पधारे; आप सब की वंदना करने का हमें अवसर प्राप्त हुआ। हम बहुत अपने आप को भूरी भाग समझते हैं। और कुछ कहना नहीं है। एक बस्तु आख़िर में-

होइहि सोइ जो राम रचि राखा ।

जो राम ने रचा है वो ही होता है। लाख प्रयत्न करो, भगवान महादेव का यह सूत्र है-

को करि तर्क बढ़ावहिं साखा ।

आदमी कहे, फलांने फलां का नुकसान कर दिया! ठीक है। उपर-उपर की धरा पर मैं भी आश्वासन देता हूं। लेकिन कोई किसीका नुकसान नहीं कर सकता है। यहां कुछ निश्चित ढ़ंग से पूरा जगत चल रहा है। जक तक दूसरों पर हम आरोप लगाते हैं, यही हमारी मूढ़ता और यही हमारी अज्ञानता है। इसमें विशेष कुछ नहीं है। इसीलिए-

होइहि सोइ जो राम रचि राखा ।

ये चौपाई कहकर फ़िर बाबाजी की बोली में एक चौपाई कहकर; यद्यपि उसकी चौपाईयां बिलग है! पूरा उसका शास्त्र बिलग है! वो मैं नहीं पढ़ पाता! वो टिकते नहीं वर्ना तो सीख जाता! लेकिन भाग जाते हैं! एक उर्दू का बड़ा प्यारा शे'र कहकर मैं पूरा करूं। बड़ा प्यारा शे'र है। आप कहो तो पढ़ूं, राधेश्यामजी! आप को ऐसी छोटी बातों में रस पड़ेगा? क्योंकि आप तो इतने उंचे सूत्रपात करते है ना! अच्छा, अच्छा। मुझे प्रिय लगा यह शे'र इसलिए आप को कहना चाहता हूं-

सिर्फ हवाओं पे आप को संदेह हुआ होगा।
चराग खुद ही जलते-जलते थक गया होगा।

(वाल्मीकि, व्यास, तुलसी अवोर्ड-२०१५ अर्पण-समारोह में चित्रकूटधाम, तलगाजरडा (गुजरात) में प्रस्तुत वक्तव्य ता.२२-०८-२०१५)

वाल्मीकि-व्यास-तुलसी अवोर्ड-अर्पण (२०१५)

।। जय सीयाराम ।।